शिवाम्बु कल्पविधि

अर्थात

स्वमूत्रोपचार चिकित्सा

स्वमूत्र प्राशन से
रोग निवारण.
अद्भुत अनुभूत योग

Daksha Bahen
Daughter of Tejpal

~~Dakhsha~~ Daksha
Bahen

शिवाम्बु कल्पविधि

अर्थात

स्वमूत्रोपचार चिकित्सा

रा. वा. कालेकर

SHRI GAJANAN

श्रीगजानन बुक डैपो, प्रकाशन
बम्बई २८–पुणे ३०

अनुक्रमणिका

प्रकाशक : रमेश विठ्ठल रघुवंशी, श्रीगजानन बुक डिपो, कबुतरखाना
दादर, बम्बई २८
मुद्रक : ज. ता. गायकवाड, मायबोली प्रिंटर्स, ४०९ नारायण पेठ,
पुणे ३०

किमत ६ रुपया

प्ररोचना

लेखक : रिसर्च प्रोफेसर रा. ब. आठवले एम. ए.
बी. जे. इन्स्टिटयूट ऑफ लर्निंग अॅन्ड रिसर्च, अहमदाबाद–९.

'शिवांबुकल्पचिकित्सा' (अथवा स्वमूत्रोपचार चिकित्सा अथवा जिसको अंग्रेजी में कहते है' Auto Urine Therapy) यह इस पुस्तक का नाम है। उसका अपना नामही उसमें आये हुए अपूर्व विषय का निदर्शक है। इसके विषय को अपूर्व कहा गया है क्यों कि हमारे भारत में और दूसरे देशोंमें भी बहुतेरे बडे-बडे रोगोंपर स्वमूत्र का इलाज या उपचार किया जाता है। 'शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्' इस उक्तिके अनुसार रोगमुक्त शरीर धर्माचरण का सबसे पहला साधन है। इस सिध्दांत को अपनाकर भारत के हठयोगी, कापालिक आदि तांत्रिक अपनी साधना शुरू करतेसमय उत्तम आरोग्य के लिए स्वमूत्रोपचार का प्रयोग करते थे और आज भी करते है। पर यह सब वे चुपचाप करते थे। उनके प्रयोगों का थोडासा उल्लेख हठयोगों के कुछ ग्रंथोमें और कुछ तंत्र ग्रंथों में आया हुआ है। आर्यवैद्यक के कुछ ग्रंथों में 'फलानी बीमारी के लिए मानवमूत्र का इलाज करना चाहिए' इस प्रकार का उल्लेख है। तो भी उन में 'स्वमूत्रोपचार' का नामोनिषान भी नहीं है। पाश्चिमात्य देशों में भी ख्रिश्चन धर्मगुरूओं की परंपरा में सैंकडों वर्षोंसे लेकर स्वमूत्रोपचार के प्रयोग चालू थे। बायबल में भी उसके बारेमें उल्लेख है। तोभी भारत के हठयोगी और तांत्रिकों की तरह पश्चिम के धर्मगुरू भी ये प्रयोग गुप्तरूप से करते थे। शायद आज भी करते होंगे।

करीब तीस साल पहले श्री. जॉन आर्मस्ट्रॉंग नाम के एक अंग्रेज सज्जन ने स्वमूत्रोपचार की श्रेष्ठता सिद्ध करने का प्रसंसनीय कार्य किया! उन्होंने पहले अपना और फिर दूसरे रोगियों का इलाज इस पद्धतीसे किया और उसकी श्रेष्ठता साबित की। इस प्रकार स्वमूत्रोपचार की गुप्तता का आव-

रण दूर करके वे उसे प्रकाश में लाये । इस काम के लिए विश्वके लोग सदा उनके ऋणी रहेंगे । करीब पचीस साल पहले उन्होंने अपने अनुभवोंपर आधारित Water of Life इस नाम की एक पुस्तक लिखी । उसके द्वारा उन्होंने स्वमूत्रोपचारका प्रचार पूरी दुनिया में किया । भारत के पाठकोंपर इस पुस्तक का बहुत प्रभाव पडा । सैंकडो, हजारों पाठक श्री. आर्मस्ट्राँग की स्वमूत्रोपचार-चिकित्सा के समर्थक बन गये । उन समर्थकों में से इस पुस्तक के मराठी लेखक (श्री. रामकृष्ण वासुदेव कार्लेकर, बी. ए. एल. एल. बी.) हैं । हम जो जानते हैं वह दुसरों को सिखाना चाहिए । इसलिए स्वमूत्रोपचार-चिकित्सा का प्रचार करने के हेतू इस पुस्तक को लेखकने प्रकाशित किया है । यह उपचार लोगों को नया लग रहा है, पर वास्तव में वह हजारों वर्षोंसे चला आ रहा है ।

Water of Life इस पुस्तक में श्री. आर्मस्ट्राँगने Auto Urine Therapy के बारे में जो लिखा है, उसकी तरफ मैं भी श्री. कार्लेकर की तरह आकर्षित हुआ हूँ । मेरे एक मित्र ने वह पुस्तक मुझको देकर उसे पढने को कहा । इस पुस्तक के विषय ने मेरे उपर गहरा असर डाला । स्वमत्र-चिकित्सा का इलाज अनेक रोगोंपर करने के बादही श्री आर्मस्ट्राँग ने यह पुस्तक लिखी । इसलिए वह श्रेष्ठ मानी गयी । प्रस्तुत पुस्तक पढनेपर मुझ यही लगा कि भारत में भी इस चिकित्सा को माननेवाले बहुत लोग मिलेंगे । नया रास्ता ढूंढनेवाला एक ही होता है पर बाद में उसपर चलने वालों की संख्या बढती जाती है । (वर्त्म कर्षतु पुरः परमेकः । तद्गतानुगतिको न महार्घः ।। नैषधीय चरित ५)

बादमें मुझको मालूम हुआ कि मैंने आर्मस्ट्राँग की पुस्तक पढी, उसके पहले ही गुजरात में इस चिकित्सा का प्रचार और प्रसार जोरसे हुआ था ।

अतः यह स्वमूत्रोपचार चिकित्सा नयी नही है। बहुत पुरानी है। बायबल के नये तथा पुराने ‘ करार ’ में उसका निर्देश और समर्थन किया है । यह बात आर्मस्ट्राँग की पुस्तकमें पढनेपर मेरे मनमें भी इसके बारेमें खोज करनेकी इच्छा जागृत हुई और मैं प्राचीन शास्त्रग्रंथोकी खोजताज करने लगा ।

एक दिन अचानक मेरे एक मित्रने 'डामरतंत्र' नामक संस्कृत ग्रंथ का 'शिवांबुकल्प' हस्तलिखित नामक अध्याय मुझको ला दिया। मित्र को पूछनेपर मालूम हुआ कि द्वारका के शंकराचार्यके पास जो संग्रह है, उसमे से एक पुराने हस्तलिखित की वह नकल है। क्या शिवांबु का मतलब स्वमूत्र ही है? इस प्रश्न का उत्तर पाने के लिए मैं योगशास्त्र के ग्रंथ देखने लगा। तब 'हठयोग प्रदीपिका' नामक ग्रंथमें निम्नलिखित श्लोक मेरे देखने मे आया–

पित्तोल्बणत्वात् प्रथमाम्बुधारा।
विवाह निः सारतयाऽन्त्यधाराम्।
निषेव्यते शीतलमध्यधारा।
कापालिके खण्डमतेऽमरोली॥

(हठयोगप्रदीपिका उपदेश ३, श्लोक ९६)

(स्वमूत्र की पहिली धारा पित्तके कारण तीव्र होती है और आखरी धारा निःसत्त्व होती है। इसलिये दोनों को छोडकर मंझली धारा के सेवन को कापालिकों के खण्डमत के अनुसार 'अमरोली' कहते है) इस श्लोक में आयाहुआ अम्बुधारा यह शब्द शिवांबुधारा इस पारिभाषिक शब्दके बदले ही आया है। हठयोग प्रदीपिका के टीकाकार ब्रह्मानंदने अपनी 'जोत्स्ना' नामक संस्कृत टीकामें यही बात स्पष्ट की है। शिवांबु शब्द का अर्थ स्वमूत्र है, यह बात डामरतंत्र के शिवांम्बुकल्प नामक अध्यायके निम्नलिखित तीन श्लोकों से साफ साफ मालूम पडती है।

चतुर्थ्यामवशिष्टायां राप्रवुत्थाय बुद्धिमान्।
मूत्रोत्सर्ग प्रकुर्वीत प्राङ्मुखः परमाशयः॥
आदिधारां परित्यज्य चरमांच त्यजेद् बुधः।
मध्यधारां प्रगृह्णीयात् (प्रकारो ह्येष उत्तमः)॥
यथा भुजंगदेहेषु मुखे पुच्छे विषंभवेत्।
एवं शिवांबुधारायां प्रकारः प्रथितः शिवे॥

(डामरतंत्र शिवांबुकल्पाध्याय श्लोक ६, ७, ८)

तीसरे श्लोक में शिवाम्बुधारा यह शब्द स्वमूत्रधारा के अर्थ में ही आया हुआ है। हठयोगियों और तांत्रिकों की परंपरा में शिवाम्बुकल्प का प्रयोग सैकडों वर्षोंसे किया जाता है।

आज भी हठयोगी साधक वर्ग में शिवाम्बुकल्प का प्रयोग सांप्रदायिक गुप्तता का पालन कर के प्रसिद्ध हठयोगी श्री. मनुवर्य ने (अहमदाबाद योगाश्रम के संचालक) यह बात मुझसे कह दी। आगे चलकर आपने यह भी कहा कि मेरे गुरुने आमरोली अर्थात शिवाम्बुकल्प का प्रयोग मुझसे करवाया। जो शरीरशुद्ध और आरोग्य के लिए आवश्यक हैं।

यह बडे आश्चर्य की और सत्य बात है कि पाश्चिमात्य वैद्यक शास्त्रज्ञोंने इस शास्त्रपूत और अनुभवसिद्ध शिवाम्बुकल्प का प्रयोग न अपने ऊपर किया न दूसरे रोगियोंपर। इतनाही नही, उसका प्रकट उल्लेख भी उन्होंने अपने ग्रंथोंमें नही किया। इसीलिये श्री. आर्मस्ट्रॉंग की जितनी सराहना की जाय उतनी थोडीही है, क्यो कि उन्होंने अपने ऊपर और दूसरोंपर शिवाम्बुकल्पके सैकडो प्रयोग करके उसकी श्रेष्ठता सिद्ध की है।

तोभी वैद्य और डॉक्टर लोग कहते होंगे कि जबतक शिवाम्बुकल्प चिकित्सा के प्रभाव की शास्त्रीय उपपत्ती नहीं पायी जाती है, तबतक हम उसको मान्यता नही देंगे और उसका प्रसारभी नहीं करेंगे। ऐसी हालत में सुशिक्षित तथा आरोग्य प्रेमी लोगोंको चाहिये कि वे अपनेलिये और दूसरोंके लिये इस चिकित्सा का इस्तेमाल करके उसकी गुणकारिता सिद्ध करे और उसे दूसरी अनुभवसिद्ध चिकित्साओं के स्तरपर बिठा दे। आर्यवैद्यक तज्ञोंसे उसकी उपपत्ती पानेकी राह न देखकर सुशिक्षित लोगों को उसका निःसंकोच प्रचार करना चाहिये। क्यों कि प्रत्यक्ष अनुभव से शिवांबुकल्प–चिकित्सा की गुणकारिता एक बार सिद्ध होनेपर उसकी शास्त्रीय उपपत्तीके लिये ठहरना अव्यवहार्य है। "न हि दृष्टेऽनुपपन्नं नाम" किसी अदृष्य वस्तुकी उपपत्ती पा नहीं सकते, इसलिये उसका अस्तित्त्व न मानना ठीक नही। मीमांसकों का यह सिद्धान्त शिवांबुकल्प चिकित्साको भी बंधनकारक है। अतः वैद्यकशास्त्र में अनभिज्ञ पर सुशिक्षित और आरोग्यप्रेमी लोगोंको

डॉक्टरों से कहना चाहिये कि अब हम इस प्रयोगसिद्ध और गुणकारी चिकित्सा का स्वीकार करेंगें और उसका प्रचार करकेही रहेंगे।'

श्री. कार्लेकरजी आम जनता के आरोग्य का बडा ख्याल रखते हैं। शिवांबु चिकित्सा की गुणकारिता पहले उन्होंने स्वयं देख ली है और वे मराठी जनता में इस छोटीसी पुस्तक के द्वारा उस चिकित्सा का प्रसार करने के लिए कटिबद्ध हुए है। उनका पुस्तक लेखन और सेवावृत्ति के लिए मैं उनका अभिनंदन करता हूँ।

मेरे ख्यालसे शिवांबु (अथवा स्वमूत्र) चिकित्सा पर मराठी में लिखी हुओ श्री. कार्लेकरजी की यह पुस्तक उसके ढंग की पहलीही रचना है!

इससे बहुत साल पहले इसी विषयपर अहमदाबाद के प्रसिद्ध समाजसेवक और भारत सेवक समाज के एक सदस्य श्री. रावजीभाई पटेल ने एक पुस्तक प्रकाशित किया था। उन्होंने इस पुस्तक का मराठी अनुवाद मेरे मित्र श्री. आबासाहब देशपांडे से करवा किया था। स्वमूत्र चिकित्सा का महाराष्ट्रमें प्रसार करने के लिये श्री. पटेलजीने यह मराठी अनुवाद छपवाकर प्रकाशित करने का निश्चय भी किया था। पर उनकी मृत्युके पहले वह यह निश्चय सफल न हो सका। क्यों कि श्री. पटेलजी की गुजाराती पुस्तक को इतनी लोकप्रियता मिल गयी की उसकी अनेक आवृत्तियाँ निकालनी पडी। हर एक नयी आवृत्तिमें नये नये रोगोंपर स्वमूत्र चिकित्सा के किये गये सफल प्रयोगोंकी जानकारी, शास्त्रीय चर्चा, उसपर किये गये तज्ञोंके अभिप्राय आदि बातें जोड दी गयीं। उसके आठवे संस्करण का आकार तो बहुत ही बढ गया। ऐसी हालत में रावजीभाई की गुजराती पुस्तक का मराठी अनुवाद पुराना और अधुरा लगने लगा। इसलिये उसके प्रकाशित होने में देरी लगेगी! अंब तो श्री कार्लेकरजी की 'शिवांबुकल्प' यह मराठी पुस्तक उस विषयपर लिखी हुई पहली ही पुस्तक सिद्ध हो सकती है!

स्वमूत्र चिकित्सा के आद्य पुरस्कर्ता श्री. आर्मस्ट्राँग की Water of Life इस पुस्तक से ही श्री. रावजीभाई पटेल को गुजराती में इस विषयपर पुस्तक लिखने की प्रेरणा मिली। श्री. कार्लेकरजी को भी उसी पुस्तक से मराठी में पुस्तक लिखनेकी प्रेरणा मिली। तोभी उन दोनो ने अपनी अपनी पुस्तकों में

उसका शब्दशः अनुवाद नहीं किया है। केवल उस पुस्तकमें आये हुए महत्त्वपूर्ण रोगों की जानकारी अपनी अपनी भाषा में दी है। उन दोनोंने आर्मस्ट्रॉंग से प्रचलित चिकित्सा-पद्धतिके अनुसार अनेक गंभीर रोगोंपर प्रयोग कर के अनुभव पाया और उसकी जानकारी पाठकों को देकर स्वमूत्र-चिकित्सा का समर्थन किया है। यही इन दोनों पुस्तकों की विशेषता है।

इन दो देशी भाषाओं में लिखी पुस्तकों में से श्री. कार्लेकरने लिखे हुए पुस्तक की विषेशता ये है की, हजारों वर्षोंकी पुरानी हठयोग परंपराकी स्वमूत्र चिकित्सा अर्थात शिवांबु चिकित्साका सविस्तर वर्णन संस्कृत ग्रंथ डामरतंत्र के शिवांबुकल्पाध्याय में है। वह वर्णन मराठी अनुवाद के साथ श्री. कार्लेकरजी की मराठी पुस्तक में दिया गया है। यही इस पुस्तक की विशेषता है। इसको प्रमाणभूत मानने में कोई आपत्ति नहीं हो सकती, क्यों कि यह अनुवाद श्री. कार्लेकरजी के एक विद्वान डॉक्टर मित्रने विनामूल्य किया है। प्रचार की दृष्टीसे मूल संस्कृत संहिता और उस का मराठी अनुवाद प्रकाशित करना बड़े महत्त्व की बात है। क्यों कि आर्मस्ट्रॉंगप्रणीत स्वमूत्रचिकित्सा ‘ आधुनिक पाश्चात्य चिकित्सा’ है, तो शिवांबुकल्पाध्याय की ‘ शिवांबुचिकित्सा ’ प्राचीन हठयोग चिकित्सा है। इन दोनो चिकित्साओं का तौलनिक अभ्यास करके शास्त्रीय आविष्कार की दृष्टी से उनपर प्रयोग करने चाहिये। ऐसा करनेसे आधुनिक पाश्चात्य और प्राचिन भारतीय चिकित्साओं का साम्य और भेद मालूम होगा। इन दोनों चिकित्साओं के अनुसार पुराने रोगोंके लिये शिवांबु-पान गुणकारी है। पर दोनो चिकित्साओं के विधीमें बहुत फर्क है। उदाहरण के लिये पाश्चात्य चिकित्सा में शिवांबुपान के साथ साथ केवल पानी पीकर लंघन करना आवश्यक है। पर भारतीय हठयोग चिकित्सा में किसीभी रोगमें लंघन का विधी नहीं बताया है। केवल इलाजों की अवधि में रोगों को विशिष्ट आहार लेना चाहियें। उसमे नमकीन और तीखे पदार्थ नहीं होनें चाहिये। रात को अल्प आहार लेना चाहिये। (अक्षार कटुकान्नाशी व लघुभुक् अध्याय, श्लोक ५)

इसके और एक फर्क है। पाश्चात्य चिकित्सा में जितनी बार और जितना हो सके उतना शिवांबुपान करना चाहिए। भारतीय चिकित्सा में बताया है

कि मूत्रोत्सर्ग करते समय शुरू की और आखरी धाराका मूत्र छोडकर मंझली धाराका मूत्रपान करना चाहिए। क्यों कि इन दोनों धाराओं में अपायकारक और अनिष्ट द्रव्ये होते हैं। मध्यधारा बहुत गुणकारी होती है।

स्वमूत्र से मालिश करना और उसकी पट्टियाँ रखना, ये दोनो इलाज दोनों चिकित्साओं में बताए हैं।

इन दो चिकित्साओं में सब से बडा फर्क यह है कि पाश्चात्य चिकित्सा में शुद्ध (केवल) शिवांबुपान का विधी है, तो भारतीय चिकित्सा में संमिश्र शिवांबुपान का भी विधी है। शिवांबु के साथ अमुक औषधि का मिश्रण करके उसका सेवन करनेपर अमुक रोग ठीक हो जाता है। इस प्रकार का सविस्तर वर्णन शिवांबुकल्पाध्याय में है। इस अध्याय को पढकर तरह तरह के रोगोंपर शिवांबुचिकित्सा का प्रयोग करके उसके परिणामों की चर्चा डॉक्टरों के साथ करना और उसकी गुणकारिता सिद्ध करके जनता में उसका प्रसार करना अब असंभव नहीं है।

आगे चलकर ऐसा समय आयेगा कि इन दोनों चिकित्साओं की अच्छी-अच्छी गुणकारी बातें इकठ्ठा आकर उससे एक नयी जागतिक शिवांबु-चिकित्सा सर्वमान्य होगी।

यह मेरा रम्य सपना है। वह सच करने की शक्ति श्री. कार्लेकरजी की पुस्तक में है! इसलिए मैं प्ररोचना के द्वारा उसका स्वागत करता हूँ।

सच पुछा जाय तो यह विषय वैद्य और डॉक्टरों का है। इसका चिकित्सा के प्रयोग करके उनको अपना अभिप्राय जाहिर करना चाहिए। पर ऐसा करने में वे हिचकिचाते है। क्या वे इस चिकित्सा को घृणास्पद मानते है? क्या उन को डर लग रहा है? कि यह चिकित्सा लोकमान्य होनेपर उनकी प्रतिष्ठित चिकित्सा की किमत कम होगी? क्या यह चिकित्सा अशास्त्रीय होने से प्रयोगार्ह नहीं है? इन सारी बारे में डॉक्टरों को खुले दिलसे कहना चाहिए। मेरे ख्याल से तो इसपर प्रयोग शुरू करनाही ठीक है। प्रयोग करनेपर अगर यह चिकित्सा निःसार और निरुपयोगी सिद्ध हुई तो उसका प्रचार बंद होगा। पर अगर वह गुणकारी और शास्त्रशुद्ध सिद्ध हुई तो पश्चिम के और पुरब के डॉक्टरों को उसका स्वीकार करना पडेगा।

अतः इस पुस्तक के बारेमें वैद्यक शास्त्रज्ञों से मेरी प्रार्थना है कि वे शुरू में ही उसकी प्रशंसा या निंदा न करके उसकी परीक्षा करें और उसके बारेमें अपना मत जाहिर करें जिससे लोगों का संदेह दूर होगा। अगर डॉक्टरों ने इस चिकित्सा की गुणकारिता के बारे में अपने अभिप्राय की जानकारी सरकार को दी तो उसको सरकारी मान्यता और प्रतिष्ठा मिल सकती है।

यह पुस्तक पढकर शास्त्रज्ञों को शिवांबुचिकित्सापर संशोधन और परिक्षण करने की प्रेरणा मिली, तो श्री. कार्लेकरजी का उद्देश्य सफल होगा। पर तबतक जनता के आरोग्य की फिक्र रखनेवाले सुशिक्षित पर वैद्यक-शास्त्र में अनभिज्ञ लोग इस पुस्तक से प्रेरणा लेकर अगर अपने ऊपर और पासके रोगियों के ऊपर इस चिकित्सा के प्रयोग शुरू करेंगे, तो भी श्री. कार्लेकरजी के परिश्रम सफल होंगे।

मुझको एक पत्र लिखकर श्री. कार्लेकरजी ने बताया है कि वे मराठी में सुंदर और सनसनीखेज भाषा का प्रयोग नहीं कर सकते। इस लिए उनको यह पुस्तक लोगोंको पेश करने में संकोच मालूम होता है। असल में इसमें संकोच की कोई बात नहीं है, क्योंकि उन्होने रुग्णोंपर यशस्वी प्रयोग करकेही यह चिकित्सा महाराष्ट्र के लोगोंके सामने रखी है। उसका वाङमयीन प्रचार करनेका उनको अधिकार है। जनता की दृष्टी से शास्त्रीय ग्रंथ के लिये आलंकारिक और प्रौढ भाषा की अपेक्षा सरल भाषा की आवश्यकता अधिक है। ऐसी पुस्तक में जनहित की दृष्टि और सत्यता की जरूरत है। ऐसी पुस्तककाही प्रभाव पाठकोंपर पड़ता है। इस कसौटीपर श्री. कार्लेकरजी की पुस्तक उतरती है। उसमें रोगहरण और आरोग्य रक्षा के लिए शिवांबुपान का श्रेष्ठ उपाय बताया है। लेखक चाहते हैं कि इस चिकित्सापर और भी शास्त्रीय चर्चा होनी चाहिए।

अतः अनेक ललित साहित्य की अपेक्षा सीधीसादी भाषा में लिखी हुई यह पुस्तक मैं अधिक कीमती मानता हूँ।

अहमदाबाद
ता. २२-१०-६८

रा. ब. आठवले

प्रोचना

मेरे मित्र श्री. रामकृष्ण वासुदेव कार्लेकर (बी, ए. एल एल. बी.) की लिखी 'स्वमूत्रोपचार चिकित्सा' (Auto Urine Therepy) इस पुस्तक के तीसरे संस्करण की प्ररोचना सिखते हुए मुझे सानंद आश्चर्य हो रहा है। इसके दूसरे संस्करण की पाँच हजार प्रतियाँ खतम हुई और पाँच हजार प्रतियों का तीसरा संस्करण निकालनेका सुयोग श्री कार्लेकरजी को प्राप्त हुआ इसलिए आनंद और महाराष्ट्र के बुद्धिवादी सुशिक्षित मध्यमवर्गीय लोगों में इसको पाठक मिले इसलिये आश्चर्य। इसका मतलब यह है कि 'स्वमूत्रोपचार चिकित्सा' को फॅड कहनेवाले लोगों की राय अब धीरे धीरे बदल रही है। किसी बात के बारे में अपना अभिप्राय देनेके पहले बुद्धिवादी लोग उसकी ठीक ठीक परिक्षा कर लेते है। वैद्यक शास्त्र की कोई चिकित्सा अच्छी या बुरी सिद्ध करने के पहले उसके प्रयोग (खुदपर और दूसरोंपर) किये जाते है। 'सन्तः परिक्ष्यान्यतरद् भजन्ते' भले-बुरे की परीक्षा करने बाद भले का स्वीकार करना चाहिए। यह-महाकवी कालिदास का कहना अनेक बातों में सत्य निकला है। इसके अनुसार महाराष्ट्र की सुशिक्षित जनता इस चिकित्सा की ओर देख रही हैं। यह बडी खुशीकी बात है। श्री. कार्लेकर की तरफ से इन लोगों का मैं अभिनंदन करता हूँ।

श्री कार्लेकरजी को सबसे अधिक बधाई देनी चाहिए क्यों कि भारतीय जनता के आरोग्यके लिये उन्होने निःस्वार्थ बुद्धि से इस उपेक्षित चिकित्सा के बार बार प्रयोग कर के उसको मान्यता प्राप्त करने के लिए आर्थिक, मानसिक और शारीरिक सब तरह के कष्ट उठाये। पचहत्तर वर्षों की अवस्था होने पर भी श्री. कार्लेकरजी आरोग्य के क्षेत्र में शारीरिक और मानसिक तप कर रहे हैं। और यह उसीका फल है कि उनकी पुस्तक का तीसरा संस्करण निकल रहा है। आखिर मैं यही चाहता हूँ कि उनका स्वार्थ-निरपेक्ष, जनहितकारी कार्य सफल हो।

बोरिवली पश्चिम, मुंबई ९२, रा. ब. आठवले

ग्रंथकर्ता का पाठकों के साथ सुखसंवाद

मुझे बहुत खुशी होती है कि मैं महाराष्ट्रीय आरोग्यप्रेमी पाठकों के सामने " मानवमूत्रोपचार चिकित्सा " इस मेरी पुस्तक का तीसरा संस्करण पेश कर रहा हूँ। मेरी पुस्तक की पाँचहजार प्रतियोंका तीसरा संस्करण इतना जल्दी निकलेगा, इसके बारेमें मैं साशंक था। इसका सारा श्रेय महाराष्ट्र के प्रयोगशील और विवेकी पाठकों को है। उनकी सक्रीय सहानुभूति के कारण आगे चलकर यह और जोर से करने की प्रेरणा मुझको मिल रही है। उनका सहृदय सहकार्यकी में मेरे परिश्रमका पारितोषिक है।

मेरे कुछ डॉक्टर और वैद्य मित्रोंने इस कार्य में मेरी बहुत मदद की है। मेरी चिकित्सा के उन्होंने खुद अपने ऊपर और अपने मित्रोंपर प्रयोग करके उसकी श्रेष्ठता और उपयोगिता के बारेमें अपने अभिप्राय मेरे पास पत्रद्वारा भेज दिये, कईयोंने मुझसे मिलकर मुझे बधाई दी। इसके लिए मैं उन सबका ऋणी हूँ। गुजरात के कई नामी डॉक्टर और वैद्योंने इस चिकित्सा के बारेमें अपना अनुकूल अभिप्राय जाहिर किया है। बंबई के कई गुजराती और पारसी डॉक्टरोंने इस चिकित्सा को योग्य और उपयुक्त बताकर अपने अपने कुटुंबियों में उसका उपचार शुरू किया है। वहाँ के समर्थ चिकित्सक डॉ. परागजी देसाई और उनके सहकारी अपने कार्य की प्रगति कर रहे हैं। उनकी और उनके स्वर्गीय सहकारी रावजीभाई पटेल की इस चिकित्सापर लिखी गुजराती पुस्तक का नौवाँ संस्करण प्रसिद्ध हो रहा है। उनकी इस पुस्तक की पचासहजार प्रतियाँ आजतक खतम हुई हैं।

महाराष्ट्र में भी " मानवमूत्रोपचार चिकित्सा " का स्वागत हो रहा है। इस चिकित्सा के प्रयोग अपने ऊपर करनेवाले रुग्णों को और शास्त्रज्ञों को मैं नम्र सूचना करना चाहता हूँ कि—

(१) वे अपने ऊपर किये प्रयोगों को क्रमवार लिखकर मेरे पास भेज दे और उन्हे प्रसिद्ध करने की अनुमति दे दें। इसका मेरे लिए बहुत उपयोग होनेवाला है।

(२) नामी शरीरशास्त्रज्ञ अपनी प्रयोगशाला में स्वमूत्र की या रुग्णों के मूत्र की शास्त्रीय परीक्षा करें और आपना आभिप्राय जाहिर करें। केवल अमरिका, इंग्लैंड और जापान के शास्त्रज्ञोंके आभिप्राय पर निर्भर रहना भारतीय शास्त्रज्ञों को शोभा नहीं देता।

लेखक का मनोगत (प्रथमावृत्ती)

नाना पूर्वपक्ष सिध्दान्त। प्रत्ययो पहावा नेमस्त।
अनुमानाचे स्वस्तवेस्त। बोलोंचि नये।

(श्रीदासबोध-दशक १९, समास २, ओवी ४)

अर्थ : अनेक प्रकारके पूर्वपक्ष औ रसिध्दान्तो को स्पष्ट करना चाहियें। अनुभवजन्य ज्ञान कहना चाहिये। फालतु बाते नही कहनी चाहिये।

विषय प्रवेश

जनवरी १९६७ की 'आयुर्विद्या' मासिकोमें प्राध्यापक रा. ब. तथा दादासाहब आठवलेजी का लेख और उसके साथ साथ डाबरतंत्र के शिवाम्बु कल्पके बारे में लिखा हुआ लेख मैंने पढा। तबसे उसके बारेमें अधिक जानकारी पानेकी इच्छा मुझमें पैदा हुई।

१९६६ में भि, आर्मस्ट्राँग की लिखी 'The water of Life' यह पुस्तक मैंने देखी थी। उसके बाद स्वमूत्रोपचार के संबंध में कई लोगोंसे सुना।

पचहत्तर साल की उम्र थी। दाहिने पैर का घुटना पिछले १०-१२ सालों से दुख रहा था। पैर मुडपनेपर कुछ आराम मालूम पडता था। पर चलते समय और पैर सीधा रखने पर पीडा होती थी। पचन क्रिया बिगड गयी थी। भोजन में थोडासा भी फर्क होनेपर महिने में दो चार बार आम्ल

पित्त की तकलीफ होती थी। उसके कारण मट्टे के ढंगके आम्ल पदार्थ बंद करने पडे। हर पंद्रह दिनों से एरंड का तेल (Cestor oil) लेने की जरूरत पडती थी।

मि. आर्मस्ट्रॉंग और श्री रावजीभाई पटेल की स्वमूत्रोपचारपर अंग्रेजो में लिखी पुस्तके पढी। उनमें स्वानुभवपर आधारित सत्य बातें बतायी थी। उसका मेरे मनपर बडा प्रभाव पडा। तोभी अनेक शकाकुशंकाओंके कारण स्वमूत्र प्राशन करने की हिम्मत नहीं होती थी।

जब तक जीना हैं, तब तक शरीर स्वस्थ होना चाहिये। जब मृत्यु आ जावे तब वह सहज और अनायास आवे। इस इच्छासे दि. ३-९-६६ को बडे तडके मैंने स्वमूत्र प्राशन किया।

स्वमूत्र प्राशन कुछ अमंगलसा लग रहा था, इसलिये उसे प्राशन करने को मन तैयार नहीं था। पर प्रथम प्राशनसे वह हिचकिचाहट दूर हुई। स्वमूत्र प्राशन करने में अमंगल कुछ नहीं लगा। शराबका शुरूका एक प्यालाभी विनाश का कारण बनता है। पर वह बात स्वमूत्र प्राशन की नहीं है। एक ही नहीं तो स्वमुत्र के प्याले के बाद प्याले पीने पर भी सेहत अच्छी होती है, इसका अनुभव किया। इस उपाय से मानव रोगमुक्त होकर दीर्घायु होता है। मि. आर्मस्ट्राँगने अपनी हिमालय यात्रा में देखा की स्वमूत्र प्राशन करनेवाले योगी डेढ सौ साल के होनेपरभी जीवित थे। अब यह निश्चित हुआ कि स्वमूत्र मानव को दिया हुआ नैसर्गिक अमृत है। इस दिव्यौषधिको मानव भूल गया इस बात का बडा दुख हुआ।

दिनांक ३–९–६६ के अनंतर हररोज बडे तडके जितना मूत्र निकलता था, वह सबका सब प्राशन करना शुरू करनेपर दिन-ब-दिन इस वृद्धावस्था में भी उसका अच्छा परिणाम दिखने लगा। स्वमूत्र प्राशन (इसको डामर-तंत्र शिवांबुकल्पविधि कहते हैं) शुरू करनेपर पहला अद्‌भुत चमत्कार यह हुआ कि रोज स्वमूत्र प्राशन के घंटे डेढ घंटे बाद नियमित रूप साफ टट्टी होने लगी। पेट साफ होनेपर उसके साथ साथ दुसरे अच्छे परिणाम दिखने लगे। अन्नपचन होने लगा, भूख बढने लगी। यकृत का कार्य सुधर गया।

साफ टट्टी, भूख और अन्नपचन के कारण उत्साह बढने लगा। उसके फलस्वरुप नींद भी अच्छी तरह सात-आठ घंटे आने लगी।

स्वमूत्रप्राशन से आम्लपित्तका उच्चाटन हुआ। घुटने दुखना चार महिनों के अंदर खतम हुआ। यह बीमारी दूसरे कई उपचारों से ठीक नहीं हुई थी। मि. आर्मस्ट्राँग के कहने के अनुसार शायद कुछ दिन केवल स्वमूत्र और पानी पीना और स्वमूत्र जमाकर दिनमें २–३ बार घुटनेपर और पैरपर रगडा देता तो जल्दी ठीक हो जाता। खाना, पीना और काम करना इनके साथ साथ स्वमूत्रोपचार से चार महिनों में ही सही पर अच्छा परिणाम निकला। मेरा घुटना बिलकुल ठीक हुआ। उस पीडा की याद भी न रही। थोडे में कायाकल्प या अमृतसिद्धीयोग का अनुभव मिला।

बहुत कोशिश करनेपर भी शिवांबुकल्पविधी के संबंध में मराठी में लिखी हुई पुस्तक नहीं मिली इसलिए मराठीभाषा भाषी लोगों को इस दिव्यौषधि से फायदा मिले, इस हेतुसे श्री. आर्मस्ट्राँग लिखित 'दि वॉटर ऑफ लाईफ' पुस्तक के आधार पर मराठी में पुस्तक लिखने का मैंने निश्चय किया। केवल अनुवाद करना नही चाहता था। उस पुस्तक का महत्त्व का भाग और स्वमूत्र सेवन से रोगमुक्ती किस प्रकार होती है इसकी जानकारी मैंने पुस्तक में लिखी है। यह जानकारी स्वमूत्र प्राशन के लिये मन को तैयार कर सकेगी। शायद इस पुस्तक के प्रसिद्ध होनेपर, पाठकों के मनकी इस विषय में मूलतः तैयारी न होनें के कारण, उनकी तरफ से लेखक को तिरस्कार सहना पडेगा।

हमारे भारत में प्राचीन पद्धतिके अनुसार औषधोपचार करनेवाले वैद्य तरहतरह की जडीबुटियों से दवाइयाँ बनाकर रुग्णोंको ठीक करते है। पर वे उनके नाम दूसरों को नही बताते। दिव्यौषधि की उनकी जानकारी उनके साथ लुप्त हो जाती है। अगर किसीको मालूम हो कि कोई असाध्य या सादा रोग किसी औषधिसे ठीक हो जाता है, तो उसे चाहिये कि वह अपना ज्ञान रुग्णों को मालूम करा दे जिससे व्यक्ति का ही नही राष्ट्रका भी फायदा होगा। औषधी का ज्ञान गुप्त रखना बडा पाप है। इस दृष्टीसे अनुभसिद्ध और फायदेमंद उपचार की जानकारी दूसरों को करा देना यह

सच्ची ईश्वरपूजा है यह में मानता हूँ। इसीलिये किसीके उपहास या तिरस्कार की परवाह न करके यह पुस्तक जनताजनार्दन की सेवामें प्रस्तुत करने में मुझे बडा संतोष और मनःशांति मिलती है।

खुद अनुभव किया और दूसरोंपर प्रयोग किये, उनको गुणकारी सिध्द हुआ। सडकके किनारे बैठकर जुते ठीक करनेवाला चर्मकार मूळव्याधी की बीमारी से त्रस्त था। उसने दोही दिन मेरा बताया हुआ उपचार (स्वमूत्रोपचार) किया और वह बिलकुल ठीक हुआ। कैसा चमत्कार है। चर्मकार को एक पैसा भी खर्चने की जरूरत नहीं पडी।

तैसे ज्ञानें तृप्त व्हावे। तेंचि ज्ञान जनास सांगावे ॥
तरतेन बुडों नेदावे बुडतयासी ॥ २ ॥
उत्तम गुण स्वये घ्यावे। बहुतांस सांगावे
वर्तल्याविण बोलावे। तें शब्द मिथ्या ॥ ३ ॥

रामदास (दासबोध दशक १२, समास १०, ओवी २-३)

स्वयं ज्ञान से परिपूर्ण होकर दूसरों को ज्ञान देना चाहिये। तैरनेवाले ने डूबनेवाले को बचाना चाहिये। उत्तम गुण पाकर दूसरों को सिखाने चाहिये। कहने के अनुसार खुद चलना चाहिये नहीं तो सब व्यर्थ हो जाता है।

इस पुस्तक में आये हुए शिवांबुकल्प के संस्कृत श्लोकों का मराठी अनुवाद प्रसिद्ध वैद्यराजने किया है। संस्कृत श्लोकों के साथ वह पुस्तक के पीछे छपा है। उससे मालूम होगा कि भारत में प्राचीन काल से गुप्त रूपसे चला आया स्वमूत्रोपचार और 'वॉटर ऑफ लाईफ' इस पुस्तक में लिखे मि. आर्मस्ट्राँग के विचार पाठकों को तुलनात्मक दृष्टी से अभ्यास करने को बाध्य करेंगे। शिवांबुकल्पविधी को पढने से पाठकों के मनपर सुपरिणाम होकर ही रहेगा। फलस्वरुप वे आपहिआप इस विधि का आचार और प्रचार करेंगे।

आत्मानुभव से विश्वास पैदा होता है। शिवांबुकल्प विधि में उपवास पर ज्यादा जोर नही दिया गया है। मि. आर्मस्ट्राँग के अनुभव के अनुसार कोई भी बीमारी उपवास रखकर चोबीस घंटे में निकले हुए स्वमूत्र प्राशन से

और आवश्यक पानी पीने से ठीक हो जाती है। उसके साथ जमाये हुए मूत्र से अंग रगडना जरूरी है। उन्होंने अपनी पुस्तक में कई रोगियों के रोगमुक्त होने के उदाहरण दिये हैं। वे खुद क्षयरोग से पीडित थे। वे खुद स्वमूत्रोपचार और अंगमर्दन से रोगमुक्त हुए और अस्पताल खोलकर सैंकडो रूग्णों को तरह तरह के रोगों से मुक्त किया।

अहमदाबाद में एक महान कॉंग्रेस कार्यकर्ता कै. रावजीभाई पटेलने मूत्रोपचार केंद्र (प्राचीन चिकित्सा अनुसंधान केंद्र, लाल बंगला, हरिजन आश्रम, अहमदाबाद १३) की स्थापना की। वहाँ रुग्णोंपर यशस्वी उपचार किये जाते हैं और इस उपचारपर अंग्रेजी, गुजराथी, हिंदी और कन्नड में लिखी पुस्तकें प्रसिद्ध की जाती है। (प्राप्तिस्थान, भारत सेवक समाज, लालभाई मेटका वंडा, पारनेर नाका, अहमदाबाद)

स्वमूत्रोपचार के लिये एक पैसा भी खर्च करने की जरूरत नहीं है। केवल निष्ठा और श्रद्धा रखनेसे रोगमुक्ति होती है। उसके कारण मनुष्य बलवान होकर दीर्घायुष्य प्राप्त करता है।

समर्थ रामदास का स्मरण करके यह उपोद्घात पूर्ण करता हूँ।

जितुके कांही आपणासी ठावे। तितुके हळू हळू सिकवावे।
शहाने करूनि सोडावे। बहुत जन॥ १४॥

(समर्थ वचन, दशक १९, समास १०, ओवी १४)

अर्थ : जितना हम जानते है, उतना सब धीरे धीरे लोगोंको सिखाना चाहिये। बहुत लोगोंको सयाने करना चाहिये।

मिरज — रामकृष्ण वासुदेव कार्लेकर

१ मे १९७१

शिवांबुचिकित्सा का गौरव

मेरे मित्र श्री. रामकृष्ण वासुदेव कार्लेकर की लिखी "स्वमूत्रोपचार चिकित्सा " पुस्तक के पहले संस्करण की प्ररोचना लिखते समय मेरी भूमिका एक संशोधक की थी। अंग्लेंड में सन १९४४ के करीब मि. आर्मस्ट्राँगने Auto Urine Therapy इस विषयपर "The water of Life" यह पुस्तक लिखी। लगातार पचीस साल स्वमूत्र चिकित्सा के (Auto urine therapy) प्रयोग अपने ऊपर और सैंकडों रुग्णोंपर करकेही उन्होंने यह पुस्तक लिखी। इस पुस्तक की प्रस्तावना में लिखा है कि बायबल के एक वाक्यसे (Drink waters out of thine own Cistern...Old Testament) उनको इस चिकित्सा के प्रयोग अपने ऊपर करनेकी स्फूर्ति मिली। यह पढकर मैंने सोचा बायबल जैसे प्राचीन ग्रंथमें इसका उल्लेख हे, तो हमारे प्राचीन ग्रंथोंमें भी कही न कही स्वमूत्रप्राशन का उल्लेख होगा ही।

इसलिये मैंने हमारे प्राचीन ग्रंथोंमें इसकी खोज करना शुरू किया। सहसा मेरे एक मित्र ने "श्री डामरतंत्रे शिवांबुकल्पविधीः" नामक हस्तलिखित की जो द्वारका के शंकराचार्य के संग्रहमें थी, एक नकल मेरे हाथ में रखी। उसका सूक्ष्म अवलोकन करनेपर मेरी राय पक्की हुई कि शिवांबुकल्प चिकित्साही मि. आर्मस्ट्राँग की Auto urine therapy है।

आर्मस्ट्राँग की पुस्तक से प्रेरणा पाकर श्री. कार्लेकरजी ने स्वमूत्रोपचार के प्रयोग शुरू किये ही थे। फिर "शिवांबुकल्पविधी" लिखा हुआ मेरा लेख पढकर उनका उत्साह और बढ गया। श्री. कार्लेकरजी के स्वमूत्रोपचार के प्रयोग यशस्वी हो रहे थे। महाराष्ट्र के रुग्णों को इस अद्भूत चिकित्सा की जानकारी मिलें और वे उसके प्रयोग करके रोगमुक्त हो जाए इस उद्देश्यसे उन्होंने १९६८ में "स्वमूत्रोपचार चिकित्सा" यह छोटी पर दुर्धर रोगों से पीडित लोगों के लिए बडी उपयुक्त पुस्तक मराठी में प्रकाशित की। श्री. कार्लेकरजी के अनुरोध से मैंने उसकी प्रस्तावना (प्ररोचना) लिखी उस समय मुझे इस बातका साभिमान संतोष ही रहा था कि जिसे

योरप-अमरिका में अपूर्व और आश्चर्यकारक माना गया, वह स्वमूत्रोपचार चिकित्सा प्राचीन भारत में भी सैंकडो वर्षोंसे चालू थी। यह बात मैं सबूत के साथ सिद्ध कर सका।

इस द्वितीय संस्करण की प्रस्तावना लिखते समय मेरी मनोभूमिका अलग है। यह चिकित्सा 'शिवांबुकल्पविधि' नाम से प्राचीन भारत में रूढ थी यह बात अभिमानास्पद है। फिर भी वह आधुनिक सब चिकित्सा पद्धतीयों में श्रेष्ठ है, यह बात पाश्चात्य शास्त्रज्ञों ने शास्त्रीय कसोटीपर सिद्ध की है। इस पुस्तक के द्वारा महाराष्ट्र के शिक्षित और अशिक्षित लोगोंकी इस चिकित्सा के बारेमें कुछ कहने का अधिकार श्री. कार्लेकरजी को प्राप्त हुआ है।

अभिमान की अपेक्षा इस चिकित्सा की श्रेष्ठता का गौरव मेरे हृदय को उल्हसित कर रहा है। पहली प्रस्तावना में मैंने कहा था कि भारतीय वैद्य और डॉक्टरों को इस चिकित्सा के प्रयोग करके उसका अभिप्राय भारत सरकार को भेजना चाहिये और सरकार को भी वैज्ञानिकों से इस पर प्रयोग करके उसका अभिप्राय जाहिर करना चाहिये। पर आज इसकी आवश्यकता नहीं रहीं। क्योंकि पिछले तीन वर्षों में भारत में इस चिकित्सा को गौरव का स्थान प्राप्त हूआ है। उत्तर भारत, गुजराथ, राजस्थान महाराष्ट्र और कर्नाटक में यह चिकित्सा प्रतिष्ठितग हो यी हैं। अब उसका Auto Urine therpy या स्वमूत्रोपचार चिकित्सा ये नाम पीछे पड गये हैं। अब प्राचीपरंपरासे परिपूत शिवांबुचिकित्सा' यह संस्कृत नाम मिला है। 'शिवांबुचिकित्सा प्रसारक मंडल' नाम की संस्थाएँ बनायी जा रही हैं। बलसाड के पचासी साल के वृद्ध और प्रसिद्ध डॉक्टर परागजी देसाई (चीफ मेडिकल ऑफिसर, धर्मादाय हॉस्पिटल, बलसाड) इस चिकित्सा के प्रचारक बने हैं। वे पंजाब और कश्मीर तक उसका प्रचार कर रहे हैं। कर्नाटक के एक मुस्लिम डॉक्टर हुणशीमरद ने दमापीडित रोगियों को 'शिवांबु' इंजेक्शन देनेका अभिनव प्रयोग शुरू किया है और वह यशस्वी हो रहा है। बंबई के कुछ प्रसिद्ध डॉक्टरों ने अपने कुटुंबियों में यह चिकित्सा

—२

शुरू की है। भारत सरकार के भूतपूर्व आरोग्यमंत्री के. के. शहा शिवांबु चिकित्सा के पुरस्कर्ता हैं। संत विनोबाजीने भी इसकी प्रशंसा की है। इस प्रकार आज भारत में सर्वत्र शिवांबुचिकित्सा के बारे मे अनुकूल वातावरण हो गया है। अब केवल स्वमूत्रप्राशन में लगनेवाली घृणा लोगों में मनसे चली जानी चाहिए। वह भी इस पुस्तक के आखरी हिस्सेमें लिखे हुए 'शिवांबुकल्पविधी' के परिशीलन से नष्ट होगी।

शिवांबुचिकित्सा को महाराष्ट्र में जो गौरव का स्थान मिला है उसका सारा श्रेय अकेले श्री. कार्लेकरजी को हैं। पिछले तीन सालमें इतनी वृद्धावस्था में भी श्री. कार्लेकरजीने इस चिकित्साका जो प्रचार किया वह कौतुकास्पद है।

उनकी निःस्वार्थ, निरलस सेवा और इस चिकित्सा की गुणकारिता के प्रभाव से ॲलोपॅथी जैसी खर्चीली और परिणाम में विकृती कारक चिकित्सा का भविष्य में भारत से पूर्ण उच्चाटन होगा यह मेरा विश्वास है।

पत्ता –
२७ संकल्प सोसायटी,
रोकडिया लेन,
पश्चिम बोरिवली,
बंबई नं. ९२

रा. ब. आठवले एम. ए
संस्कृत और प्राचीन भारतीय
संस्कृति के प्रधानाध्यापक

ता. १५–६–१९७१

१

उ ेद्घात

अच्छी सेहत जीवन की सच्ची दे॰॰ है। मानव यह जानता है, तो भी वह सेहत की तरह ध्यान नहीं देता। हमारे खाने-पीने पर हमारा स्वास्थ्य निर्भर है। शरीर का कोई अंग अकार्यक्षम बन गया, तो समझना कि हमारे अन्न में कुछ अनिष्ट बात हुई है। प्राचीन काल में आजके प्रचलित औषधोपचार और शस्त्रक्रियाएँ नहीं थी। आधुनिक युग में हजारो डॉक्टर्स, हजारो परि-चारिकाएँ, औषध, दंतवैद्य, रसायनवेत्ते, रासायनिक औषध बेचनेवाले, रुग्णों को देखकर रोगों का निदान करने के लिए केंद्र आदि सब तरह के तंत्र और साधन हम देखते हैं। इतने प्रकारकी साधनसामग्री होते हुए भी हजारो शस्त्रक्रियाएँ चलती रहती हैं। इसका मतलब यह है कि शस्त्रक्रिया के पहिला किया हुआ उपचार असफल होता है।

इन सब प्रकार के साधनोपचार के कारण प्राचीन औषधोपचार के प्रति विश्वास नष्ट हो रहा है। प्रचलित औषधोपचार से मनुष्य बिलकुल रोग-मुक्त नहीं हो सकता, क्यों कि कॅन्सर जैसे रोगोंपर अबतक गुणकारी उपचार नहीं मिला हैं। उसकी खोज के लिए लाखों रुपये खर्च हो रहे है। तरह तरह के रोगोंपर लसें तैयार करने के लिए हजारो प्राणियोंकी हत्या हो रही है। नॅच्युरोपॅथी से भी आदमी रोगमुक्त नही हो सकता। शरीर में से विषैले द्रव्य (टॉकझिन्स) नष्ट किये जा सकते हैं, पर उसके साथ साथ नष्ट किये गए घटक धातु (वेस्टेड टिशूज) सुधारे नही जाते। पर स्वानु-भव से निश्चित रूप से कह सकते हैं कि एक प्राचीन औषधोपचार पद्धती से (स्वमूत्रोपचार) मानवी शरीर में उत्पन्न होनेवाले रोगों को नष्ट कर सकते हैं। केवल महारोगपर इस प्राचोन पद्धति के उपचार का (स्वमूत्रोपचार) क्या परिणाम होता है यह पाश्चात्य देशोंमें नही देखा गया है।

इस प्रकार की दिव्यौषधि का संग्रह मानव के शरीर में है और उसके सेवन से और मर्दन से मानव रोगमुक्त हो सकता है । इस दिव्यौषधि का संग्रह गुप्त रखनेलायक नहीं है । अगले अध्याय में उसका स्पष्टीकरण किया जायगा, इसलिए उसका कोई पेटंट या अधिकारपत्र लेनेकी जरूरत नही है। कोई भी खोज दूसरों से कहनेमें अगर मानव की उन्नती हो तो वह ईश्वरपूजा होगी । जिस उपचार के बारेमें अब कहा जायगा, उसके लिए एक पैसा भी खर्च करनेकी जरूरत नहीं है ।

२

तरह तरह के रोगोंका रामबाण उपाय अर्थात मानवमूत्र ।

स्वमूत्रोपचार के स्वानुभव कहने के पहले स्वमूत्र यह रोगमुक्त करने वाला प्रभावी अस्त्र किसप्रकार है यह बतानेवाले प्राचीन और आधुनिक काल के कुछ अभिप्राय कहना ठीक होगा ।

उन्नीसवी शताब्दि के प्रारंभ में 'एक हजार संस्मरणीय बाते' इस नाम की पुस्तक अंग्लैंड, स्कॉटलंड और आयलंड में एक साथ प्रसिद्ध हुई ।

प्रतिदिन सुबह पहली बार का स्वमूत्र नियमित रूपसे नौ दिन पी लेना शरीर के अंदरूनी और बाहरी विकारों का विश्वव्यापी और उत्तमोत्तम उपचार है । ऐसा करने से रक्तपिती जैसी असाध्य बीमारी ठीक हो जाती है और साथ साथ मन प्रसन्न होकर शरीरमें चपलता आती है ।

जलोदर और कामला जैसे रोग उपरिनिर्दिष्ट उपचार से ठीक हो जाते हैं ।

कान में स्वमूत्र डालने से बहिरापन, कान में आवाज होना और कान के दूसरे रोग ठीक हो जाते है ।

आखों में स्वमूत्र के बूंद डालने से आखों का चिक्कटपन नष्ट होकर आँखें साफ होती है और दृष्टि सुधरती हैं।

स्वमूत्र के पानी से हाथों को मलने से उनकी जडता दरारे, व्रण आदि नष्ट होकर उनकी संधियाँ जम्य हो जाती हैं।

ताजे घावपर मूत्र लगाने से जल्दी भर जाता है। मूत्र का पानी लगाने से खाज ठीक हो जाती हैं। गुदद्वार को मूत्रसे धोने से या उसपर मूत्र ने भिगोई पट्टी रखने से उसकी जख्म या बवासीर ठीक हो जाता है।

मराठी में एक पुरानी कहावत है 'कापलेल्या करंगळीवर लेकाचा लघवी सुद्धा फुकट करणार नाही' (अर्थ :- दूसरों की मदत न करनेवाला किसीकी कटी हुई अुंगलीपर मुफ्त में पेशाब भी नहीं करेगा।) इसका मतलब यही है कि कटीहुई अुंगलीपर मूत्र का उपाय है।

विज्ञान शास्त्र और रसायन शास्त्रमें मानवमूत्र और जानवरों के मूत्र का उपयोग है। मूत्र यह रक्तजल है। मूत्रपिंड का रक्त नाडी में से जाने के बाद उसका मूत्र में रुपांतर होता है। पुरुष या स्त्री का मूत्र गरम, कभी-कभी गाढ, पिघलनेवाला, धीरे धीरे घुलनेवाला और सडने की क्रिया को रोकनेवाला होता है। मूत्र प्राशन से बीच की बाधाएँ दूर होकर यकृत की क्रिया सुलभ होती है। इसके अलावा प्लीहा, व्रण, उदर, कामला, स्त्रियों के अनियमित ऋतुस्त्राव, प्लेग, तीव्र ज्वर आदि बीमारियाँ सतत मूत्रसेवन से ठीक हो जाती हैं।

बाह्योपचार से शरीर की त्वचा चिकनी बनती हैं। क्यों कि मूत्र गरम होने के कारण रगडते समय शरीर में सोखा जाता है और उसका परिणाम अच्छा होता है। विषैले शस्त्र से किया गया घाव मूत्र से धोनेपर उसका विषैलापन नष्ट होकर वह साफ हो जाता है और सूख जाता है। सीरकी त्वचाके साथ जो सफेद मल, खरवे होते है वे स्वमूत्र लगाने के बाद निकल जाते हैं।

नाडी पर मूत्र में भिगोई पट्टी रखने से बुखार उतरता है। कंपवात, जडता, अर्धांग, प्लीहा आदिपर मूत्र में भिगोई पट्टी रखने से बीमारी ठीक हो जाती है। रगडते समय मूत्र के क्षार त्वचा में से शरीर के अंदर सोखे

जाते हैं। शरीर की अनेक व्याधियाँ मूतप्राशन से और उसके बाह्योपचार से ठीक हो जाती हैं। मूत्राशय की और गर्भाषय की बीमारियाँ मूत्रसेवन से ठीक हो जाती है। इतनी सारी प्रशंसनीय बाते कहनेपर और एक बात कहनेलायक है। अठारहवी शताब्दि में अंग्लेंड के एक प्रान्त में रहनेवाले एक दंतवैद्यने मूत्र को मुह धोने के लिए अत्यंत उपयुक्त बताकर उसकी प्रशंशा की और प्रचार किया।

३

मूत्रोपचार के संबंध मे आधुनिक काल के मत-प्रवाह

इंद्रियप्रवर्तक आंतरोत्सर्ग स्राव के संबंध में सशोधन करके एक पाश्चात्य प्राचार्यने खोज की है कि कुछ हारमोन्स मूत्रपिंड से निकलकर मूत्र में आ जाते हैं।

बहूत महत्त्वपूर्ण होने से निम्नलिखित दो परिच्छेद जैसे के तैसे उद्धृत किये हैं।

" A recent discovery regarding the activity of hormones has completely revolutionised their study... viz. that certain of them filter through the kidney to pass out in the urine. Multiple hypophysical hormones, the hormones of the adrenal and hormones of the sexual glands, have been found in normal urine...... The discovery of hormone urinology has had far-reaching consequences. Urine provides a practically unlimited quantity of basic matter......... From the

therapeutic point of view it is possible to envisage the use of these human hormones as apparantly capable of exercising great power over the human organism."

Pro. Jean Rostande

"As the urine content vaires according to the pathological state of the patient, its use is indicated in all forms of diseases except those acused by traumatism (broken limbs) or those that are of mechanical nature. It saves the physician from the mistake that is made in selecting the indicated remedy from three thousand drugs or more... What cannot be cured by the forces of the body con't be cured by the forces outside the body."

Dr. T. Wilson Deachman, Ph. C., M. D.

मूत्र यह उत्तमोत्तम द्रव्य हमारे शरीर में होता है। लास के रुप में उसका उपयोग होता है। मूत्रोपचारसे केवल टूटे हुए हाथ पैर जोडे नहीं जा सकते। कमसे कम तीन हजार औषधियाँ हैं। उनमें से कौनसी औषधी उपयुक्त होगी इसका निश्चय करना बहुत कठिन है। मूत्रोपचार सब प्रकारके रोगोंपर उपयोगी है।

एक गिर्यारोहक स्वमूत्रप्राशन के कारण माउंट एवरेस्टपर चढनेमें सफल हुआ। उसको थकावट मालूम ही नही हुई। उलटे बढे हुए उत्साहसे उसने माउंट एवरेस्ट चढनेका विक्रम किया। तिबेट के लामा हिमालयवासी योगी स्वमूत्रका नित्य सेवन से दीर्घायुषी हुए है। इसके अलावा उनको मूत्रप्राशन से घने बन में प्रवास करने की ताकत मिलती है। इ. स. १८६० से सन १८७० के बीच अंग्लैंड के कुछ डॉक्टरोने यह अनुभव लिया कि मूत्रोपचार से कामला की बीमारी चार-पाँच दिनोंमें ठीक हो जाती है।

जिप्सी लोगोंमें स्वमूत्रोपचार लोकप्रिय है। जिप्सी लोग मूत्रपिंड की बीमारी और जलोदर के लिये गोसूत्र का उपयोग करते हैं। लगातार साठ सालतक हररोज चार पिंट गोमूत्र पीनेवाले लोग उस जातिमें पाये गये हैं। उनके अस्सी साल के आदमी का सुगठित शरीर देखकर इधर के युवक को शरम लगेगी। गोमूत्र इतना प्रभावशाली है। तोभी वह स्वमूत्रकी बराबरी नही कर सकता। यह देखा गया है कि मूत्रपिंड की बीमारी गोमूत्र के उपचार की अपेक्षा स्वमूत्रोपचार से (स्वमूत्र पीना, उपवास करना और आवश्यकता के अनुसार ताजा पानी पीना) जल्दही ठीक होती है। अतिप्राचीन काल में यूनानी लोग ताजे घाव पर स्वमूत्रोपचार करते थे।

आधुनिक सुधार के काल में भी मूत्रोपचार का आस्तित्व है। स्वमूत्र सेवन के कारण सुप्रसिद्ध सज्जन डब्ल्यू. एस. बॅक्टर, ज़े. पी. सौ साल के हुए है। इतना ही नही वे कॅन्सर जैसे असाध्य रोग से पीडित थें, वह भी स्वमूत्रोपचार से ठीक हुआ है। यह सज्जन बहुत वर्षोंतक हररोज तीन बडे ग्लास भरके नियमित रुपसे मूत्रसेवन करते थे। वे कानोंमें और आँखोमें मूत्र डालते थे। डाढी करनेकेबाद मूत्र का लेपन करते थे। घाव, फुनसी, सूजन आदिपर मूत्र का बाह्योपचार सफल होता है, यह उन्होंने स्वानुभवसे बताया है। मि. आर्मस्ट्रॉग, मि. जॉन डब्ल्यूपर उपचार करते थे। उस समय उन्होंने मूत्र और पानी पीकर उपवास किया। बहुत बडी बीमारी को नष्ट करनेके लिये केवल मूत्र और पानी पीकर उपवास करने के सिवा दूसरा कोई प्रभावशाली और गुणकारी मार्ग नहीं है।

गोमूत्र के द्रव्यसे बडी भारी कीमत के शरीर को लगाने के (Toilet Soap) बनाये जाते हैं। चेहरेपर लगानेके कीमती क्रीम्स में भी मानव मुत्रके द्रव्यों का समावेश होता है।

४

कुछ आक्षेपोंका स्पष्टीकरण

कइयोंका कहना है, कि अगर मनुष्य के लिये स्वमूत्रोपचार इतना उपयुक्त है, तो उसकी जानकारी उसे जन्मसेही नैर्सगिक रूपसे होनी चाहिये। दीर्घ श्वासोच्छ्वास से सेहत अच्छी होती है। पर इस बात की जानकारी आदमी को जन्मतः नहीं होती। आदत से होती है। दीर्घ श्वासोच्छ्वास से योगी लोग सौ-डेढ सौ सालकी दीर्घायु पाते हैं। नशैली चीजें या सिगारेट की आदत मनुष्य को जन्मसे नही होती। ऐसी बुरी आदते वह बाद में अपनाता है।

दूसरा आक्षेप : मनुष्य जिस द्रव्यका विसर्जन करता है, उसीको फिरसे पेट में कैसे लिया जाय? निसर्ग का अवलोकन करनेपर इस प्रश्न का उत्तर मिलेगा। पेडसे गिरे हुए पत्तों को सडाकर खाद तैयार करते है। फिर उसी खाद को पेडोंके तलेमें डालते हैं जिससे पेड जोरोंसे बढते है और अच्छे-अच्छे बडे–बडे फलोंसे लद जाते हैं। जिस समय पेड बढते नही है और सूखें जाते है, उस समय उस पेड के और दूसरे पेडोंके झडे हुए पत्तों को सडाते है और पेडों के तले जमीन में भर देते हैं। इसी खाद से पेडोंपर फूल और फल आने लगते हैं। निसर्ग में जो पदार्थ त्यागें हुए दीखते हैं, उनका भी उपयोग होता हैं। सूखे पत्तोंको जमाकर उनकी राख का उपयोग खाद्य के लिये करते हैं। यह खाद बडी अच्छी होती है। यही नियम मूत्र को लागू है। मानव मूत्र का पृथक्करण करके देखा गया है कि उसमें बहुत से प्रभावशाली द्रव्य हैं। हम क्या खाते है ? क्या पीते है ? यह जानने से बीमारी का निदान करनेमें मदद मिलती है। किसी के मूत्र में शक्कर उतर गयी, इसका मतलब यह नहीं हैं कि उसको मधुमेह हो गया। क्योंकि अनुभवसे यह मालुम हुआ है कि दिनभर लेमन जैसा मीठा पेय पीनेपर और दुसरा कोई पदार्थ न खानेपर मूत्र में शक्कर उतरती है। मूत्र में श्वेतकल्क (श्वेतकल्प) का

उतरना भी अन्नपर अवलंबित है। अब दुसरे आक्षेप के बारेमें अधिक स्पष्टीकरण की आवश्यकता नहीं है।

मूत्रका पृथक्करण करलेनेपर उसमें मिलनेवाले धातुधर्मयुक्त क्षार :–

Urea N (Nitrogen	अंतरिक्षमें होनेवाली एक वायु)	682
Urea	मूत्रसत्त्व (युरिआ)	1459
Creatinine	... .	36
Creatinine	... ...	97.7
Uric acid N	मूत्राम्ल	12.3
Uric acid	... ...	36·6
Amino N	... ...	9·7
Ammonia N	एकतरहका वायुरूप पदार्थ	47
Sodium	सिंध, समुद्र (धातु)	212
Potassium	एक सफेद धातु (पालाश)	137
Calcium	रसायनशास्त्रका एक मूलतत्त्व	19·5
Magnesium	मग्न धातू	11·3
Cloride	क्लोरीन का मिश्रण	314
Total Sulphate	पूर्ण गंधकाम्लका क्षार गंधकित	91
Inorganic Sulphate	जडगंध्रकाम्लक्षार	·83
ph	... ...	6.4
Total acidity as c.c. (कुल आम्लता)		
No / 10 acid	... ...	27.8
Allontain (c 4 H 3, O3. N 4)		

No mention of valuable hormones is made in the above.

शरीर के लिये हितकारक, मौल्यवान धातुधर्मयुक्त क्षार मानवमूत्र में होते है यह बात पृथक्करण से दिखाई देती हैं। बायोकेमिक सिस्टिम्स ऑफ मेडिसिन का अभ्यास करनेवाले ही इसमें रस ले सकते है। ऐसा देखा गया है कि मूत्र में होनेवाले द्रव्योंके मिश्रण में हमारे खाने-पिने के मुताबिक फर्क

पड जाता है। मूत्र का प्रमाण खाने-पीनेपर और ऋतुओंपर अवलंबित है। रात में निकलनेवाले मूत्र से १/३ या १/४ से कम होता है। अन्नरसायनवेत्ता (फूड-केमिस्ट) तथा बायोकेमिस्ट जिन द्रव्यों को शरीर के लिये उपयुक्त बताते हैं, वेही द्रव्य मानवमूत्र में होते है और वे मूत्रोत्सर्ग में शरीर के बाहर निकल जाते है, यह एक गलतफहमी है। क्यों कि ऐसे विषैले पदार्थ को किसीने साबित नही किया ह। अथाह सागर में किसी जहाज के डूबने के बाद उसके यात्री का खलासी अपनी जान बचाने के लिए छोटी छोटी नावों में (Lifeboats) बैठकर प्रवास शुरु करते है। उस समय मीठा पानी न होने से वे स्वमूत्र पीकर प्यास बुझाते हैं। अगर मूत्र विषयुक्त होता तो उसके पीने से या तो आदमी मर सकता है या बीमार पडता है। पर इन में से कुच्छ भी नही होता। स्वमूत्र पीना उपकारक है। उसका सुपरिणाम फौरन दिखाई नही देता, पर आखिर वह अच्छा होता हैं। मान लिजिये कि मूत्र के शरीर में होनेपर वह विषवत है, पर उस के बाहर निकलनेपर उसको उसी अवस्था में पी लेना फायदेमंद हैं। थोडे से समय में मूत्र सेवन के लाभ वरदान की तरह मालूम होते है। मूत्र कितना भी गाढा, कम, तीव्र बाह्यत: विषैला और गंदा दिखनेवाला, घृणा पैदा करनेवाला और खराब क्यों न हो. अगर उसे मूत्रपिंड के रोग से या इन्फ्लूएंझा से पीडित रोगी पी ले तो वह शुद्ध बनता है और उसका प्रमाण बढ जाता है। मूत्र पीनेवाले इस सत्यस्थिति का अनुभव कर सकते है।

और एक सवाल उठता हैं कि मूत्र पीना फायदेमंद है यह बात अगर प्राचीन काल से मालूम है, तो वह उपाय योजना पीछे क्यों पड गयी? इसका उत्तर हम इस प्रकार दे सकते हैं। जैसे जैसे नये अविष्कार हुए, तरह तरह की दवाईयाँ प्रचलित हुईं और स्वमूत्रोपचार पीछे पडने लगा। प्रचलित औषधोपचार विश्वसनीय नही हैं। जो सिखाया जाता है उलमें सत्य कम होता है। जो बाते सत्तर वर्षों के पहले सिखायी जाती थी वे आज विश्वसनीय मालूम नहीं होती, जो बाते आज सिखायी जाती हैं, वे शायद पचास वर्षो के बाद निरुपयोगी मालूम होंगी।

एक आदमी को सिरदर्द की बीमारी थी। वह दस डॉक्टरों से मिला। दसों ने अलग अलग ढंग की चिकित्सा की। किसी के भी उपचार से सिरदर्द ठीक नहीं हुआ। पहले डॉक्टरने नाक में कुछ बिगाड बता कर नाक के तज्ञ डॉक्टर के पास जाने को कहा। दूसरे डॉक्टर ने कहा कि नाक में तो कुछ नहीं हुआ है आँखों के तज्ञ डॉक्टर के पास जाओ। तीसरे ने कहा की ब्लड प्रेशर के कारण सिरदर्द है। इसलिये परहेज रखना होगा। चौथे ने बताया कि इलेक्ट्रिक ट्रिटमेंट चाहिये क्यों कि लिव्हर बढ गयी है। पाँचवें ने कहा कि लिव्हर नहीं बढी है पर उसमें से अधूरा पित्त बाहर निकलता है। छठे ने कहा Pitutary glands ठीक काम नहीं देती। इसिलिए Gladular injections लेनी पडेंगी। सातवेने कहा कि Intestinal Poisoning हुआ है, इसलिये मिताहार करना चाहिये और धूम्रपान छोडना चाहिये। आठवेने कहा कि सिरदर्द का कारण Nervous debility है। नौवे ने कहा कि कोई खास बात नहीं है केवल मामुली सिरदर्द है। दसवेने कहा कि High blood pressure है, इसलिये परहेज रखना चाहिये। इस प्रकार सादे उपचार से ठीक होनेवाली बीमारी के बारे में बढा-चढाकर बताया जाता है।

कुछ लोग कहते है कि मूत्रप्राशन एक घिनौनी बात हैं। केवल उसको पीने की हिम्मत करनेवाले लोगही उसकी स्तुति करते हैं। असल में स्वस्थ शरीर में से निकले मूत्र का स्वाद इप्सम सॉल्ट जितना भी बूरा नहीं होता। सुबह का ताजा मूत्र जरासा कडुआ और खारा होता हैं। जैसे जैसे उसको पीनेकी आदत होती है, वैसे वैसे वह घिनौनी नही लगती। अन्न के बदल के अनुसार मूत्र के स्वाद में फर्क पड जाता है। किसी बडी बीमारी में निकलने वाला मूत्र दिखने में खराब लगता है पर स्वाद में वैसा नहीं होता। मूत्रप्राशन के बारे में विचार करनेपर और उसके आक्षेपों का स्पष्टीकरण करनेपर ऐसा लगता है कि आखिर अनुभवही उसके गुणों का निर्णय कर सकता है।

जैसे कोई पदार्थ छन्नी से छानने से शुद्ध और स्वच्छ होता है, वैसे मूत्र पेट में लेनेपर शुद्ध और साफ बनाता है। दिनभर मूत्र और पानी पीनेपर

फिरसे बाहर निकलनेवाला मूत्र एकदम साफ दिखता हैं। शरीर में कही कोई बाधाएँ निर्माण हुई हो तो वे सब मूत्रसेवन से दूर हो जाती है। वह जीवनावश्यक इंद्रियों को मजबूत बनाता है। बीमारी में शरीर की बिगडी हुई क्रियाएँ ठीक हो जाती हैं।

फेफडे, स्वादुपिंड, यकृत, मगज, हृदय आदि इंद्रियाँ मूत्रप्राशनके कारण तरोताजी बनती है। मगज के मज्जतंतू पेट, आँतोंके रोग और पेटदर्द जैसे बडे रोग मूत्रप्राशन और उपवास से ठीक हो जाते है। पानी और फलोंके रस पीकर रहनेपर भी जो साध्य नही होता. वह मूत्रसेवन से साध्य होता है।

५

स्वानुभवाधिष्ठित सत्यकथा

खुदको जांचनेवाला थोडासा अनुभव भी हजारो वादग्रस्त बातों को रोकता है। उदाहरणार्थ पिछले महायुद्ध के समय एक ३४ वर्षीय सज्जन सैन्य में भरती होना चाहते थे। इसलिए वे डॉक्टरी जाँच के लिये भरती केंद्रपर दाखील हुए। चार डॉक्टरोंने उसकी जाँच की। उन्होंने बताया कि वे क्षय से पीडित है। इसलिये सैन्य में भरती नहीं हो सकते इसके बाद वे सज्जन एक तज्ञ डॉक्टर के पास गये। उन्होंने बताया कि क्षयरोग वगैरह कुछ नहीं है सिर्फ स्वच्छ हवा, सूर्यप्रकाश और तबीयत को जँचनेवाला सीमित आहार लेने से सब कुछ ठीक होगा। उसके अनुसार उपचार करनेपर एक साल में उनका वजन २८ पौंड से बढ गया। तो भी उन्हे संतोष नहीं मिला फिर वे और एक तज्ञ डॉक्टर के पास गये। उन्होंने दोनो फेफडों में बिघाड हुआ है, ऐसा निदान किया। उन्होंने उनको शक्कर निर्माण करनेवाले पदार्थ और पिष्टमय पदार्थ खाने की सलाह दी।

इस प्रकार उपचार करते करते उनको मधुमेहको पीडा शुरू हुई। फिर हफ्ते के पहले चार दिन हररोज छे पिंट पानी पीकर उपवास करना, फिर पाँचवे छटे, और सातवे दिन अल्प भोजन करना, इस प्रकार परहेज और उपचार शुरू हुआ। उसके फलस्वरूप मुँह आना, दात दुखने लगे, जीभ और मसूडों में सूजन आ गयी। इस प्रकारकी तकलीफ होनेपर भी उन्होंने वह उपचार सोलह हफ्तोंतक जारी रखा। कफ, जंधापृष्ठशूल, छर्दी ये बिमारी ठीक हुयी। इसी तरह लगातार दो साल परहेज रखनेपर भी उनको गुण नहीं आंया। इसलिए उनका उन उपचारोंपर से विश्वास नष्ट हुआ। (1) Drink waters out of thine own cisturn (Old testement (2) When thou fastest annoint thy head & wach thy (New testament, Matheu 6–17) इन अर्थपूर्ण वाक्योंकी उनको याद आयी। इसके आलावा एक सज्जनने उनकी लडकी को लगातार तीन दिन स्वमूत्र पीनेको दिया और उसकी घटसर्प की (Diptheria) बीमारी ठीक हुई। कामला पीडित रोगी के बारे में भी ऐसाहि अनुभव आया था। सोचते सोचते उनको एक पुरानी घटना याद आयी। उस समय डॉक्टरने उनके मूत्र की जाँच करके उनके फेफडों में और स्वादुपिंड में बिघाड बताया। तब उस सज्जन ने डॉक्टर से पूछा था अगर मूत्र में से ये द्रव्य नष्ट होते हें तो क्या फिरसे मूत्र पीना अच्छा नही हैं ?' उस समय डॉक्टरने समझाया कि मूत्र निर्जीव होने से शरीर मे एकरूप नहीं होता। पर उस स्पष्टीकरण से उनका समाधान नहीं हुआ। जब उनको बायबल के वाक्योंकी याद आयी, तब उन्होंने लगातार ४५ दिन एक बूंदभी न गँवाकर स्वमूत्रप्राशन किया। इसके अलावा नल का स्वच्छ पानी आवश्यकतानुसार पिकर उपवास किया। और बाहर से शरीर को मूत्र लगाकर उसे रगडा। डॉक्टरों के कहने के अनुसार मनुष्य अन्नके बिना ग्यारह दिनों से अधिक जी नही सकता। पर यह बात झूठ निकली। छियालिस वें दिन उसनें कच्चे मांस का एक छोटा टुकडा मुँह में डाला और धीरे-धीरे वह मांस खाने लगा। बीमारी ठीक होनेपर भी उसने स्वमूत्रप्राशन नहीं छोडा। पैंतालीस दिनों के बाद उसका कायाकल्प हो गया। वजन १४० पौंड हुआ। असली उम्रसे

उसको अपनी उम्र दस-बारह साल से कम मालूम पडने लगी। उस समय उनकी आयु छत्तीस साल की थी, तो भी उनकी त्वचा छोटे लडके की तरह चिकनी हो गयी।

पैंतालीस दिनों के उपवास के बाद शुद्ध, सात्त्विक और आवश्यक आहार लेना और थोडा थोडा स्वमूत्र पीना यह उनका परिपाठ हुआ। इसके फलस्वरुप वे युवक से बन गये। उसके बाद उनको किसी तरह की बीमारी नहीं हुई।

अपना अनुभव और ज्ञान का फायदा दूसरों को मिले इसलिये वे सज्जन स्वमूत्रोपचार का प्रचार करने लगे। वे अपनी निगरानी में रूग्णो को स्वमूत्रोपचार और उपवास कराने लगे। कौनसे रोगोंपर कैसे उपचार किये यह सब सिलसिलेवार और सुस्पष्ट लिखकर उन्होंने 'Water of Life' यह मौल्यवान पुस्तक प्रसिद्ध की। उनका नाम है जॉन डब्ल्यू. आर्मस्ट्राँग। उनकी पुस्तक में आयी हुई जानकारी और अनुभव बडे. उदबोधक, उपयुक्त और मानव के आचार-विचारों को नयी दिशा दिखानेवाले हैं।

६

गँग्रीन : यह बीमारी बहुत भयानक होती है जिस में शरीरका कोई अंग सड जाता है। एक बार यह बीमारी हो जानेपर रोगी का जीना मुश्किल होता है। पर इस प्रकारकी भयानक बीमारी भी स्वमूत्रोपचार से ठीक हो जाती है।

एक लडके के चहेरेपर कुछ रोग उत्पन हुआ। वह दंतवैद्य के पास गया। उसकी जाँच करके दंतवैद्यनो उसका एक दाँत निकाल दिया। पर उस समय

जहाँ जख्म हुई थी, वह भाग सड ने लगा। उसके बाद सब तरह के उपचार कर ने पर भी रोगी मर चुका।

करीब उसीके उम्रके दूसरे लडके के गाल पर ततैया ने (गांधील माशी) काटा। उसपर सूजन आयी। उसकी माँने उसके गालपर बारबार उसका मूत्र लगा दिया और मूत्र में भिगोयी पट्टियाँ रखीं। कुछ घंटो के बाद सूजन उतर गयी और लडका अच्छा हुआ। यही उपचार पहले लडकेकी माँ को बताया गया था पर उसने तिरस्कारसे उसको नही माना। उसके फलस्वरूप वह उपने लड़के को खो बैठी।

मूत्र में भिगोयी पट्टीयाँ रखना यह बाह्योपचार है। उसके साथ स्वमूत्र अगर पी लिया जाय तो रोगमुक्त होने में देर नही लगती। स्वमूत्रोपचार के समय अन्न वर्ज्य करके केवल मूत्र और पानी पीकर उपवास करना उत्तमोत्तम और प्रभावशाली उपचार है।

एक बार एक गँग्रीनसे पीडित रोगी अस्पताल में था। उसकी देखभाल करनेके लिये मूत्रोपचार करनेवाला उसका मित्र वहाँ जाता था। वह मित्र रोगीकी शुश्रुषा कर रहा था, इतनेमें डॉक्टर आये और उन्होने जाँच की। डॉक्टरने जाहिर किया कि जो कोई इस रोगीको ठीक करेगा उसे सुवर्णपदक दिया जायगा। उस मित्रको विश्वास था कि स्वमूत्रोपचारसे वह उस रोगीको रोगमुक्त कर सकेगा। पर मूत्रोपचार पर विश्वास न रखनेवाले लोगों से उसे स्वर्णपदक कैसे मिल सकता था? स्वमूत्रोपचार का प्रचार, प्रसार और उपचार करनेवाले को तो ऐसे लोगोंसे तिरस्कार सहना पडता है।

डॉक्टर के उपचार असफल होनेपर एक गँग्रीन से पीडित ५३ वर्षीय स्त्रीपर स्वमूत्रोपचार का प्रयोग किया गया। उस यतस्था में स्वमूत्रोपचार के बारे में मन शंकित हुआ। पर हिम्मत से उपचार शुरू हुआ। उसीका मूत्र उसे पीनेको देना और बाह्यांग मर दूसरे व्यक्तिका मूत्र रगडना, उसके साथ साथ पीनेको पानी दिया गया और उपवास रखा गया। दस दिनों के बाद समाधानकारक सुधार हुआ। आठारहवें दिन गँग्रीन पीडित पैर बिलकुल ठीक हुआ। मूत्र के बाह्योपचार से जखमकी जगहपर नयी त्वचा आ गयी और सब जख्म भर गयी। दाग भी नही रहा।

मूत्र निर्जीव द्रव्य नहीं है। उसमें चर्बी, रक्त और जीवनावश्यक धातुका मिश्रण है। इसलिए फुन्सी जैसा असाध्य रोगभी उससे ठीक हो जाता है।

उपरिनिर्दिष्ट रुग्ण की मूत्रोपचारसे रोगमुक्त होनेकी बात प्रसृत हो गयी। फिर गँग्रीन से पीडित और रोगी भी मूत्रोपचार करने लगे और रोगमुक्त हुए। मूत्रोपचार की बात फैल गयी। दूसरी बीमारीयों से गँग्रीन को मूत्रोपचार से ठीक करने में समय कम लगता है। अंगछेदन करने के सिवा दूसरा कोई मार्ग नहीं है ऐसा डॉक्टर से बतानेपर भी कई रोगी स्वमूत्रोपचारसे अच्छे हुए। इसप्रकार स्वमूत्रोपचार ने बता दिया कि गँग्रीन जैसा रोग भी असाध्य नहीं है।

लंडन के प्रसिद्ध डॉक्टर एम. फॉरबेस रॉसने फुन्सी से पीडित रुग्णों को साबुन के ये उपयोगी क्षार से रोगमुक्त किया। पर उनकी मृत्यु के बाद एकभी डॉक्टर ने उस उपचार को नहीं अपनाया। डॉ. रॉसने उस उपचार के बारे में एक पुस्तक लिखी, पर वह अब उपलब्ध नहीं है। अच्छा होता ! अगर दूसरे डॉक्टर उसके बारे में और अन्वेषण करते।

प्रसिद्ध सर्जन डॉ. राबा ग्लियटीने जहरबादके (काळपुळी) पाँच सौ रुग्णोंपर शस्त्रक्रियाएँ की। पर सारी असफल रहीं।

एक साठ सालकी नर्स को जहरबाद की बीमारी हुई। शस्त्रक्रिया न करनेका उसने निश्चय किया। और दस-पाँच दिन वह जिन्दा रह सकती थी। फिर स्वमूत्रसेवन, पानी पीना, उपवास करना, ताजे या जमाये हुए मूत्रसे अंग रगडना आदि मूत्रोपचार शुरू हुए। उससे तबीयत सुधरने लगी। उसके बाद वह औरत छे साल जीवित रही। इससे मालूम होता है कि जहरबाद के लिये केवल शस्त्रक्रिया यही एकमेव उपाय नहीं है। जहरबाद के कई रोगी मूत्रोपचारसे अच्छे हुए है। उसीप्रकार स्तनोंतर जहरबाद होनेपर स्वमूत्रोपचार करके कई स्त्रियाँ रोगमुक्त हुई है।

इन उदाहरणोंसे मालूम होता है कि नैसर्गिक उपचारोंसे ठीक होनेवाले रोग शस्त्रक्रिया करके अंगछेदन करने पर भी ठीक नहीं होते। अगर कोसीको अपने शरीरपर कही गाँठ (Lump) निकल आनेका शक भी आया,

तो उसे फौरन् स्वमूत्रोपचार शुरू करने चाहियें। निसर्ग कभी धोखा नही देता पर जो लोग आखिर के क्षण तक कुछ भी नही करते, उनको भुगतना पडता है। अगर जहरबाद का रोगी मूत्रोपचारसे रोगमुक्त हुआ, तो उसे जहरबाद हुआ ही नहीं था ऐसा प्रचार विरूद्ध पक्षके लोग करते हैं। डॉ. राबा ग्लियटीने कहा है जिनके स्तनपर जहरबाद का रोग हुआ था ऐसी कई स्त्रियों की जाँच मैंने की। उन्होंने शस्त्रक्रिया न करके स्वमूत्रोपचार किया। कुछ दिनोंके बाद रोगमुक्त होकर वे मुझसे मिलने आयी। मुझे बडा आश्चर्य हुआ, क्यों कि उनके स्तनपर कही भी बीमारी का दाग तक नही था।

कुछ लोगोंका कहना है कि बहुत करके शाकाहारी लोगोंको जहरबाद की बीमारी होती है। दूसरे पक्ष के लोग कहते है कि मांसाहारी लोगों में यह बीमारी अधिक हैं। शाकाहारी और मांसाहारी यह विवाद्य विषय छोडकर हम कह सकते है कि हमारे अन्न में किसी चीज का कम-अधिक होना इस बीमारीका कारण है। अन्न किसी भी ढंग का हो, पर उसके साथ साथ शरीर के लिये पोषक धातु धर्मयुक्त क्षार पेट में न जाये तो जहरबाद जल्दी होता है। आरोग्य के लिये रक्त और शरीरघटक धातू की आवश्यकता होती है। इसलिये ये दो चिजें जिस अन्न में मिलती है ऐसा अन्न लेना चाहिये।

स्वस्थ शरीर में धातु धर्मयुक्त बारह क्षार रहते हैं। इसलिये जादा नमक नहीं खाना चाहिये। केवल साग सब्जी पकाने में जितना उपयुक्त हो उतनाही खाना चाहिये। दूसरे क्षारों के बारे में भी यही बात है।

विचार करनेपर यह मालूम होता है कि ॲनिमियासे लेकर कॅन्सरतक सारे रोग अयोग्य अन्न के कारण होते है। औषधोपचार के धोखेबाज इश्तिहार पढकर मनुष्य बेचैन होता है। उसके मन में एक तरह का डर निर्माण होता है। उस डर के कारण भी कॅन्सर जैसी बीमारी हो सकती है।

मूत्रपिंड की बिमारी : लोहितांग ज्वर, शरीर का भीगना, जुखाम, मद्यार्क-वाले नशीले पेय आदि के कारण मूत्रपिंड की बीमारी हो जाती है। उनमें २९ प्रतिशत लोग मद्यार्कवाले नशीले पेय के कारण और १२ प्रतिशत लोहितांग ज्वरसे बीमार होते है। शरीर में फॉस्फेट नामक क्षार का अभाव होने

से मूत्रपिंड के रोग हो जाते है। यह बिमारी पुराने जमाने से चली आयी है। उन्नीसवी सदीमें और आज भी वह बहुत फैली है और कई लोगों की उसके कारण अकाल मृत्यु होती है।

एक चालीस सालकी औरत को यह रोग हुआ। डॉक्टरने उसे चार दिनोंकी मेहमान बताया। श्वासोच्छ्वास करना मुश्किल हुआ। अत्यंत कम, गाढा, लाल रंग का पीपमिश्रित मूत्र बाहर निकलने लगा। एक साल पहले वाले फोटो में वह औरत बिलकुल स्वस्थ दिख रही थी। उसका सामान्य वजन १४४ पौंड था। जाँच के समय वह १८० पौंड भरा। डॉक्टर के अभिप्राय के अनुसार वह केवल और दो दिन जिंदा रहनेवाली थी। किन्तु मूत्रोपचार करनेवालेका इस बातपर विश्वास न था। उसमें आत्मविश्वास पैदा किया गया कि वह जल्दी ठीक होगी। फिर मूत्रोपचार शुरू किये गये। एक हफ्ते के अंदर सौगुना अधिक मूत्र उसके शरीर से निकलने लगा। चार दिनों में मूत्र का रंग बदल गया। उसका स्वाद बदल गया, बदबू गायब हुई। अब मूत्रका एक भी बूंद न गँवा के वह उसे पीने लगी। चौबीस घंटों में १८० औंस पानी पेट में जाने लगा। तीसरे दिन प्यास कम हुई। चौथे दिन से चिंता कम हुई। यह उपचार लगातार चालू रखने के लिये उसकी देखभाल करने को दो परिचारिकाएँ रखी गयी। तेवीसवे दिन वह औरत पूर्ण रूप से अच्छी हुई। तेवीस दिन अन्न वर्ज्य था। उपवास जारी था। पर दुर्भाग्यवश एक परिचारिकाने उसे नींबू के रस के साथ गाजर का रस मिलाकर पीने को दिया। उसका बुरा असर हुआ और बीमारीने पलटी खायी। मूत्र का प्रमाण घट गया। पेट मे सूजन आयी और क्षोभ बढ गया। एक परिचारिका के मूत्र में कपडा भिगोकर उस औरत के पेटपर रखा गया। दोनों बाहुओंने धीरे धीरे मूत्रसे रगडा गया चार घंटो के बाद मूत्र में भिगोये कपडे की आर्द्रता शरीर में खींची गयी और मूत्र पूर्ववत निकलने लगा। फिर वह अपना मूत्र पीने लगी। केवल बाहुओंकी फुन्सियों को नष्ट होने में आठ दिन लगे।

पूरे बदन को दो दो घंटोतक मूत्र से रगडना यह स्वमूत्रोपचार का महत्त्वका भाग हैं। केवल इस उपचार को सहने की ताकत रूग्ण में होनी

चाहिये। बाह्यांग रगडने के लिये परिचारिका का मूत्र और पेटमें लेनें के लिये स्वमूत्र. इसके साथ साथ थोडा थोडा पानी पीना। उपरिनिर्दिष्ट रोगी को फिरसे सुधरने के लिये ४८ दिन लगे। अडतालिसवें दिन दुबारा शुरू किया हुआ उपवास दोपहरको एक बजे मोसंबी का रस पीकर छोड दिया। फिर दो घंटो के बाद पूरी एक मोसंबी छीलकर चूसने को दी गयी। उसके बाद उस स्त्रीके शरीर से भरपूर मूत्र निकला और बडे उत्साह से उसने वह पी लिया। उसकी तबीयत बिलकुल ठीक हुई। शाम को साडे छे बजे मछली का उबला हुआ टुकडा और दो उबले हुए आलू (न छीलकर) उसको खाने को दिये गये। उस समय उसका वजन ११९ पौंड हुआ। दूसरे दिन उस को मिताहार दिया गया। उसने अच्छी तरह चबाके वे पदार्थ खाये। एक हफ्ते के बाद वह घूमने-फिरने लगी। स्वयं कपडे चढाकर कमरे के अंदर चलने लगी। उसका चेहरा सतेज हुआ। बाह्योपचार बडा प्रभावशाली होता है। उससे सब प्रकारके त्वचा-रोग ठीक होते हैं। उस उपचार से यह परिणाम हुआ कि उस स्त्री के पति और परिचारिका इन दोनों ने स्वमूत्रोपचार शुरू किये। इस उपचार के बाहर आहार मित, नियमित औंर शरीरके लिये पोषक होना चाहिये और स्वमूत्र सेवन जारी रखना चाहिये। उस स्त्री के रोग मुक्त होने का परिणाम लोगोंपर अच्छा हुआ। पर वैद्यकीय व्यवथा करने वालोंसे उत्तेजन नही मिला। स्तुति की बात तो दूरही रही।

इस प्रयोग के बाद अन्य रोगी उपचार के लिये आने लगे। कई रूग्णों ने ४२, ५३ या ६० दिनोंका उपवास, एक बूँद भी व्यर्थ न गँवा के स्वमूत्र सेवन और उसके साथ थोडा-थोडा पानी पीना शुरू किया। बाह्यांग को परिचारिका के मूत्र से मर्दन करना, यह उपचार दिव्य, प्रभावशाली और रुग्ण को बचानेवाला सिध्द हुआ। अनेक उदाहरणोंसे लोगों को यह बात जँच गयीं।

जीने के लिये रुग्णको थोडासाभी अन्न देना बडी भारी भुल है जिससे रुग्णकी मृत्यु जल्दी हो जाती है। स्वमूत्रही रुग्णका अन्न है। मूत्रका शरीर-घटक धातुओंपर अच्छा परिणाम होता है। बुरे परिणाम को हटाने के लिये

स्वमूत्रके सिवा अन्य उपचार असफल होते है। उपरिनिर्दिष्ट उपचारोंसे मुत्रपिंड के रोगोंसे पीडित रोगी पूर्णतया अच्छे हुए है।

◆

७

प्लीहा के संबंध मे रक्तक्षय

यह बात निश्चित है कि साधारणतया कोई भी बीमारी होनेपर शरीर में प्रतिकूल द्रव्य निर्माण होते हैं। शरीर के अलग अलग अंगोंके स्वतंत्र उपचार करना गलत है। जैसे शरीरमें कुछ विकृति पैदा होनेपर आँखोंकी बीमारी हो जाती है। एक स्त्रीको अंधत्त्व आनेपर उपचार शुरू हुए। अंधत्त्व के साथ साथ उसको बवासीर की बीमारी भी थी। बवासीर का ऑपरेशन हुआ। उस समय आँख के परदे में बाधा उन्पन्न होकर आँखमें विष निर्माण हुआ। फिर स्वमूत्रोपचार से बेकार बना हुआ मज्जातंतू कार्यान्वित हुआ और उस स्त्री दृष्टि सुधर गयी।

◆

८

Leucocy thamin on Leukaemia

असल में क्या बिगाड हुआ है? और कैसे हुआ? इसकी छानबीन न करके बहुत सारे उपचार रक्तक्षय के रोगीपर किये गये। पर कुछ फायदा नहीं हुआ, इसलिये स्वमूत्रोपचार शुरू हुआ। केवल स्वमूत्र और पानी पीकर बदन पर मूत्र रगडनेका बाह्योपचार शुरू हुआ। उस रुग्ण की

हालत इतनी खराब हुई थी, कि स्वमूत्रोपचार से भी वह ठीक होगी या नहीं इसका विश्वास नहीं आ रहा था। बडी मुश्किल यह मूत्रोपचार एक हफ्ते भर जारी रखा। तबीयत थोडी सुधरने लगी। किंचित चलनेकी शक्ति आ गयी। विशिष्ट प्रकारका अन्न लेनेकी शर्तपर उसको उपवास छोडनेकी अनुमति दी गयी। पेटमें स्वमूत्र लेना और बदनपर मूत्र रगडना, खाने को ताजे फल, शहद, टोमॅटो, सॅलड, उबली हुई सब्जियाँ, बिना छिले उबले हुए आलू, धारोष्ण दूध आदि शुरू हुआ। उस रुग्णने ये बाते श्रद्धासे की। आहार मित था। छे महिनों के बाद उसके रक्त की जाँच की गयी। उसमें सुधार के चिन्ह दिखायी दिये। रोगी को संतोष हुआ। इतना सुधार होनेपर भी उसने स्वेच्छासे मूत्रोपचार चालू रखा। पहले जैसे वह फल, शहद और धारोष्ण दूधका आहार लेता था। बारह हफ्ते ऐसा उपचार करनेपर वह बिलकुल ठीक हुआ। पर फिरसे उसने खाने-पोनेपर जो नियंत्रण था वह छोड दिया और कुछ दिनोंके बाद उसकी मृत्यु हुई। महत्त्वपूर्ण बात को (नियमबद्ध आहार) तरफ उसने ध्यान नहीं दिया। स्वमूत्रोपचार छोड दिया। आखिर जो होना था सो हो गया।

९

यकृत की बीमारी

योग्यरूपसे मित आहार लेते रहनेपर यकृत की बीमारी से पीडित रोगी जी सकता है। वैसे तो यह रोग असाध्य माना जाता है। खोजकी तौरपर इस रोगसे पीडित एक रुग्ण का ऑपरेशन होनेवाला था। उसके पहले उस रोगी को परहेजपर रखा गया और स्वमूत्रोपचार किये गये।

पहले उसके मूत्र को बदबू आती थी और वह दिखने में अमंगल और घृणास्पद थी। पैर, गरदन और चेहरे को मूत्रसे रगडना शुरू हुआ। मूत्र से शरीर का मर्दन करना और सिर, चेहरा और गर्दन को इस प्रकार मूत्र से रगडना जिससे वह भीतर सोखा जाय, यह बात उसमें मुख्य थी। उसके साथ स्वमूत्रप्राशन, आवश्यकतानुसार घूंट-घूंट पानी पीना, सादा, हलका और नियमित आहार लेना, ये बातें भी थी। थोडेही दिनों से नर्सिंग होम में दाखिल होकर ऑपरेशन करने का विचार छोड दिया गया। इस प्रकार एक महिना उपवास रखनेपर रोगी बिलकुल ठीक होकर कामपर जाने लगा। बारह हफ्तों के बाद उसकी सेहत पूर्ववत हो गयी। उसने खरीदी हुई सारी दवाएँ फेक दी।

कोई मनुष्य स्वमूत्रौपचार करता हैं, इसलिये उसका बहिष्कार करना याने उपयुक्त, गुणकारी उपचार को ठुकराना है। यह बडी घातक है।

कई शास्त्रज्ञों का मत हैं कि कुछ लसों के कारण कॅन्सर और हार्टडिसीज जैसे रोगों का फैलाव होता है।

१०

मलेरिया के समान ज्वर

एक सतरह साल की ज्वर से पीडित लडकी थी। स्वमूत्रोपचार पर विश्वास होने से उसके पिता उस उपचार के जानकार मनुष्य के पास गये लडकी की हालत बतायी। शुरू में स्वमूत्र पीनेकी हिम्मत नहीं हुई। उसके बाद स्वमूत्र और पानी पीकर उपवास करने का उसने निश्चय किया। उपवास के पहले उसका ज्वर १०५ डिग्री था। बडी कमजोरी थी। उसका मूत्र गाढा, खराब, जलानेवाला था। उपचार के चौवीस घंटो के बाद उसका ज्वर १०१ डिग्रीपर उतरा। मूत्र स्वच्छ होने लगा। तीन दिनों के बाद बुखार १०० डिग्रीपर उतरा। पाँच दिनों से ९'५ डिग्रीपर आया और लडकी का

चेहरा तरोताजा दिखने लगा। वह उल्हसित हुई। उसने अठारहवे दिन उपवास छोडा। उसकी अंगकांति छोटे बच्चे जैसी दिखने लगी। वह बिलकुल ठीक हुई। उसके बाद उसने स्वमूत्रोपचार जारी रखा। कुछ वर्षों के बाद उसकी शादी भी हुई।

मच्छरों के कारण मलेरिया होता है। उसका इलाज होता हैं क्विनिन। कुछ दिनोंके लिये तो ठीक लगता हैं। पर बाद में यह बिमारी बारबार होती है। स्वमूत्रोपचार, पानी पीना और उपवास करना इन तीनों बातों के कारण मलेरिया का रोगी हमेशा के लिये अच्छा होता हैं। दूसरे ज्वरों के भी यह उपचार गुणकारी है।

११

ORCHITIS

बदनपर सूजन आना, क्षत पडना, यह ऑर्चिटिस नामक असमंजस में डालने वाली बीमारी है। बाहुमें चोट, गाल-सूजन अदिसे यह बीमारी होती है। अंग्लैंड में यह बीमारी बहुत कम होती है। ऑर्चिटिस से पीडित रूग्ण अगर डॉक्टर के पास जाय, तो डॉक्टर बताएगा कि यह बीमारी बडी भयंकर है। जिससे रोगी का बचना असंभव है। इस रोग से पीडित एक १९ सालका रोगी था। एक हफ्ता हुआ टट्टी नहीं हुई थी। शरीर के एक भागपर सूजन थी और अंड बढते बढते टेनिस के गेंद के जैसा बडा हुआ था। जननेंद्रिय की लंबाई १४ इंच होकर उसका रंग काला हुआ था। बहुत तकलीफ हो रही थी। उस रूग्ण को देखकर हर एक का दिल पिघल जाता था। तीन दिन उसने अन्न नहीं लिया था, केवल पानी पी रहा था। उसको

पेशाब नहीं हो रहा था। इसलिये उसकी देखभाल करनेवालेने अपना एक पिंट मूत्र रोगीको पिलाया। दो घंटों के बाद रोगी को बूंद बूंद से एक प्याले भर पेशाब हुआ। वह मूत्र गाढा, गंदा कुछ काला और बदबूदार था। पर बिना हिचकिचाये रोगी ने वह पी लिया। चार घंटों के बाद फिरसे उसे एक पिंट भर पेशाब हुआ। ऊपर किये हुए वर्णन के समान ही उसने उसको भी पी लिया। उस मूत्र में कोई स्वाद नहीं था। छे घंटों के बाद उसे टट्टी हुई। उस में भयंकर बदबू थी। उस के बाद उसे फिरसे पेशाब हुआ, वह भी उसने पी लिया। उसके अनंतर वह बिस्तर पर विनासायास लेट गया। उसके पहले वह पैर फैलाकर सो नहीं सकता था। आठ घंटों के बाद दर्द कम हुआ। फिर दूसरे आदमी के मूत्र में कपडे की पट्टियाँ भिगोकर रोगी के पेट, छाती, हाथ सिर पैर आदि भागोंपर रखी गयीं। उसके बाद जैसे जैसे पेशाब होने लगा वैसे वह पीने लगा। तबीयत में आराम पडने लगा।

उपरिनिर्दिष्ट उपचार जारी रखनेपर चौथे दिन उसको २४ घंटों में २२ पिंट पेशाब हुआ। उसको भी उसने पी लिया। उपचार करनेवाले सज्जन दूसरे गाँव चले गये। तब रोगीके एक डॉक्टर मित्रने एक चमचभर गेहूँ कूट-कर उसको पाणी में मिलाकर रोगीको दिये। उसका भयंकर और विपरीत परिणाम हुआ। पेशाब बंद हुआ। फिरसे पूर्ववत मूत्रोपचार शुरू हुए। उसके बाद सोलहवे दिन रोगीने उपवास छोड दिया। उस समय केलव मोसंबीका रस दिया गया। आठ दिनों के बाद एक गिलास दूध दिया गया। रोगी को अच्छी नींद आयी। अठारहवे दिनसे पच्चीसवे दिन तक कोल्ड बीफ, उबली हुई मछली, उबला हुआ बिना छिला आलू, अंडा, ताजे फल, सॅलड, टोमॅटो ऐसा आहार शुरू हुआ। छब्बीसवे दिन रोगी रोगमुक्त होकर कामपर जाने लगा। उसके बाद उसने युक्ताहार और स्वमूत्रसेवन जारी रखा। उसकी तबीयत बिलकुल ठीक हुई।

जिस डॉक्टर ने उस रोगीको थोडे घंटों का मेहमान बताया था, उसने उसको स्वस्थ हालत में देख लिया, तब उसे बडा आश्चर्य हुआ। उसने

मूत्रोपचार के संबंध में एक प्रबंध लिखा और अंग्लैंड तथा अमरिका की मासिक पत्रिकाओं में छापने के लिये भेज दीया।

पर अखबार और मासिक पत्रिकाओं की कुछ निश्चित नीति होती है। उसके अनुसार डॉक्टरके उस प्रबंध को प्रसिद्धी नहीं मिली। यह बडे दुर्भाग्यकी बात है। क्यों कि उसके प्रसिद्ध न होनेसे दूसरे कई रोगी उस उपचार से वंचित रहे।

१२

व्हिनीअरीअल रोग : गरमी, उपदंश।

गरमी तथा उपदंश से पिडीत रुग्ण को साधारणतया दस साल के बाद घबराहट, अर्धांगवायू, कंपवात आदी बीमारीयाँ हो जाती है। आगे चलकर पूरा शरीर अर्धांगवायू से त्रस्त होता है। शरीर में फैले हुए विष को नष्ट करनेके लिये सरकारी और खाजगी उपचार-केंद्र होते है। तो भी स्वमूत्रोपचार जाननेंवाले लोग वही उपचार शुरू करते है। नेचरक्युअर-पद्धतीपर विश्वास रखनेवाले एक आदमी ने गरमी से छुटकारा पाने की आशा से केवल पाणी पीकर ग्यारह दिन उपवास किया। उस उपचारसे उसकी बीमारी ठीक होने के बदले ज्यादा बढ गयी।

उन दिनों में स्वमूत्रोपचार के संबंध में प्रसिद्ध किये गये लेख उसके पढने में आये। उसके अनुसार स्वमूत्रसेवन, उसके साथ घूंट घूंट पानी पीना, अन्नवर्ज्य करना और बाह्यांग को मूत्र से रगडना, ऐसा उपवास और उपचार उसने शुरू किया। दस दिनों के बाद बीमारी पूर्णतया गायब हुई। तो भी उसको जड से उखाडने के लिये उसने और आठ दिन उपवास और उपचार

किये। उसके कारण उसकी कर्णेंद्रियाँ, ज्ञानेंद्रियाँ, दृष्टी, रुचि घ्राणेंद्रिय आदि पहलेकी अपेक्षा अधिक कार्यक्षम हो गयी।

अलग अलग दवाइयों के इंजेक्शन्स लेने का परिणाम क्या होता है, इसके बारेमें विचार करना आवश्यक है।

गरमी का प्रादुर्भाव होते ही तुरन्त स्वमूत्रोपचार करना चाहिए जिससे ४८ से ९६ घंटों के अंदर रोग नष्ट हो जाता है। सरकारी क्लिनिक्स में स्वमूत्रोपचार करना संभव नहीं है, पर खाजगी तौरपर डॉक्टर्स यह उपचार कर सकते हैं। धीरे धीरे उसका फायदा मालूम होगा। किसी भाग के सडने को रोकने वाले द्रव्य मूत्र में होते हैं, इसलिये मूत्रोपचार जरूर करना चाहिये।

१३

न भरनेवाले घाव भर जाते हैं। जलेहुए अंगपर प्रभावशाली उपचार

संयोगवश एक स्वमूत्रोपचार करनेवाले आदमी के दोनों घुटने, हृदय, और पैर झुलस गये। बडा भयंकर दृष्य था। उँगलियाँ संकुचित हुई। नाखून जल गये। पीडा असह्य थी। उसको बड़ा धक्का बैठ गया। डॉक्टरी उपचार न करनेका उसका निश्चय था। वह मूत्रोपचार से अनुभव लेना चाहता था।

मूत्रप्राशन और पानी पीकर चार दिन उपवास करने का उसने निश्चय किया। जमाये हुए मूत्र में कपडा भिगोकर उसकी पट्टियाँ उसने जले हुए अंगोपर रख दी। बार बार उनपर मूत्र डालकर उनको गीला रखा। वे पट्टियाँ चार दिनों तक वैसीही रखीं। उसके बाद निकाली। आश्चर्यकारक परिणाम हुआ। जलने के कारण जो विकृती थी वह दूर हुई। दोनो पैर,

घुटने और कदम पूर्ववत हो गये । त्वचा नरम हुई । विशेष उल्लेखनीय बात यह है कि पैरों की उँगलीयों पर आया हुआ दाग उस उपचार से चला गया । और कुछ उदाहरणों से यह दिखाई दिया कि न भरनेवाले घाव भी मूत्रकी पट्टीयों के कारण भर गये ।

एक आदमी को कंधेके नीचे बाहू को बंदूक की गोली लग गयी । एक साल उपचार करनेपर भी घाव न भरा । घाव की लंबाई १० इंच और चौडाई $\frac{3}{8}$ इंच थी । इसके अलावा उसमें व्रण पडा और पीप निकलने लगा । प्रचलित उपचार से फायदा नहीं हो रहा था । मूत्रोपचार से घाव भर जाता है, यह मालूम होनेपर वह उपचार करने के लिये रुग्ण तैयार हुआ । उसकी पत्नी विरोध में थी । ऐसी हालत में अपनी जिम्मेदारीपर उसने मूत्रोपचार करनेका निश्चय किया । जमाये हुए मूत्रमें कपडा भिगोकर वह दिन में तीन बार घाव धोने लगा और उसी मूत्र से अंगमर्दन करने लगा । रुग्णने स्वमूत्र और पानी पीकर तीन दिन उपवास किया । थोडी देर के लिये वह नंगे बदन धूप में बैठने लगा । तीन दिन के बाद और सात रोज उसने वही उपचार किया । घाव पूर्ण भर गया । पूरे साल तक घावसे पीडित आदमी निसर्ग की मददसे चंगा हो गया ।

इस प्रकारके सैंकडो रुग्ण मूत्रोपचारसे चंगे हुए हैं । जितना जल्दी उपचार होता हैं, उतना जल्दी गुण आता है ।

स्वमूत्रोपचार करनेवाले एक सज्जन को एक प्रसिद्ध डॉक्टरने पत्रमें लिखा कि मैंने स्वमूत्रोपचार के प्रयोग किये । उसकी सफलता आश्चर्यकारक है । घावपर स्वमूत्रोपचार सफल होता है । वह किसी अन्य उपचार से हारनेवाले नहीं है । मूत्र में रहनेवाला अलोनटेन नामक द्रव्य अन्य द्रव्योंकी तरह प्रकावशाली है । दूसरे रोगोंपरभी स्वमूत्रोपचार के प्रयोग करके जैसे मुझे अनुभव प्राप्त होंगे, वैसे आपको लिख दूंगा ।'

◆

१४

बिस्तरमें पेशाब होना

यह एक बडी बुरी आदत है। घबराहट और रक्त के अभाव के कारण खासकर बच्चोंमें यह बीमारी दिखायी देती है। अशक्तता के साथ साथ जिन बच्चोंको चुनचुने की बीमारी (worms) है, उनको यह रोग होता हैं। इस आदतवाले बच्चे बढते हैं, पर सुखी नहीं होते। एक नौ सालके ENURESIS नामक बीमारी हो गयी। उसके लिये प्राचीन और प्रचलित इलाज किये गये। पर वह कृश, बेचैन और उदास हो गया। फिर ग्यारह दिनोतक स्वमूत्रोपचार और उपवास करनेपर वह बिलकुल तगडा हो गया।

स्त्रियोंके मासिक रज:स्राव के समय होनेवाली पीडा।

एक स्त्रीको लगातार दो साल अनियमित रज:स्राव होता था, कभी जल्दी, तो कभी देर से। एकबार तो लगातार पंद्रह दिन रज:स्राव होता रहा। अनेक उपचार किये, पर सारे व्यर्थ रहे। उस स्त्रीने स्वमूत्रोपचार, पानी पीकर उपवास करना यह प्रयोग किया। तब वह अच्छी हुई। फिरसे उसे वह तकलीफ कभी नहीं हुई। उपवास के समय अन्य व्यक्तिके मूत्रसे उसका बाह्यांग रगडा जाता था।

मूत्रपिंड में दाह

इस रोगसे पीडित एक आदमी मृत्यूके मार्गपर था। सब तरह के उपचार करनेपर भी सफलता नहीं मिली। मूत्र में दुर्गंधि होने के कारण रोगी उसे पीनेको तैयार नहीं था। जब उपचार करनेवालेने रोगी का थोडा मूत्र खुद पीकर बताया, तब कहीं रोगी स्वमूत्रप्राशन को तैयार हुआ। लगातार ३० दिन स्वमूत्रोपचार, पानी पीना और उपवास यह प्रयोग जारी रहा। उसके बाह्यांग रगडनेके लिये स्वस्थ आदमी के मूत्र का इस्तेमाल किया। रोगमुक्त होनेपर रोगी ने नियमित रूपसे दिन में दुबारा स्वमूत्र पीना जारी रखा।

श्लेष्मा

एक सशक्त, छे सालके लडके की नाकमें से श्लेष्मा आने लगा । डॉक्टरन उसको एरंड तेल लेनेको कहा । डॉक्टर के चलेजाने पर संयोगवश एक मूत्रोपचार करने वाले सज्जन वहाँ आये । वे उस लडके के पिता के मित्र थे । उन्होंने उस लडके को ४८ घंटे मूत्रोपचार किया । दो दिनों के बाद लडके को आराम पडा । उसके बाद फिरसे चार दिन उपचार और उपवास जारी रखे । उस लडके की माँको और बहन को वही बीमारी हो गयी, तब उन्होंने वही उपचार किया और वे दोनो अच्छी हो गयी ।

आँखमें चोट

एक रुग्णकी आँख में नुकीली परेग घुस गयी । उसको धीरे से बाहर निकाला गया । उसके बाद स्वमूत्रोपचार करनेपर रुग्ण की आँख बिलकुल अच्छी हुई ।

PSORIASIS : A disease characterised by slight elight elevations the surface of the skin coured with whitsh scaies·

बदनपर चोइयाँ निकलना ।

एक साठ सालके आदमो को यह बीमारी हुई । एक हफ्तेभर स्वमूत्रोपचार पानी पीना और उपवास जारी रखा । चार महिनों के बाद फिरसे एक एक हफ्ता उपचार किया । बीचमें मिनमें तीन बार बदनपर स्वमूत्र रगडना चालू था । रोगी बिलकुल अच्छा हुआ । उसके बाद भी स्वमूत्रोपचार जारी था । सत्तर सालकी आयु में वह छप्पन सालका दिखने लगा । चोइयाँ. उकवथ (एकजीमा) आदि बीमारीयाँ मूत्रोपचारसे फौरन और आसानीसे नष्ट होती है । नाक में होनेवाला त्वग् रोग ठीक होने में जरा देर लगती है । यह रोग असाध्य माना जाता है ।

गठिया की बीमारी के कारण आनेवाला बुखार और उसके बाद आनेवाला शैत्यज्वर

इस बीमारी के पहले एक आदमीका वजन १६ स्टोन (१४ × १६ = २२४) था । जाँच के समय वह १४ स्टोन (१४ × १४ = १९६) भरा । अत्यंत

मलावरोध, निद्रानाश और चिन्तासे वह पीडित था। कमरपर, घुटनेपर और पेटपर सूजन थी। एक हफ्तेभर स्वमूत्रोपचार करके और घूंट घूंट पाणी पीकर रुग्णने उपवास किया। साथ साथ अन्य स्वस्थ आदमीके मूत्रसे रोगीके बाह्यांग को रगडा गया। रोगी चंगा बनकर कामपर गया।

दंतरोग : दाँतों में से पीप निकलना।

एक आदमीको दंतवैद्य के पास जानेकी आदत ही थी। एक बार डॉक्टरने बताया कि उसके दाँतोंसे पीप निकलता है। उस आदमीने स्वमूत्रोपचार के बारेमें सुना था। वह मूत्रोपचार करनेवाले के पास गया। वह सुबह रोज स्वमूत्र प्राशन करने लगा। सात हफ्ते उपचार करनेपर पीप निकलना बंद हुआ। मुँह की बदबू नष्ट हुई। यह सुनकर दंतवैद्य चकित हुआ। उपवास की भी जरूरत नहीं पडी। पायोरिया होनेपर दाँत उखाडना गलत है, यह बात डॉक्टरको मालूम हुई।

स्थूलता

३० सालकी विवाहित स्त्री थी। वजन १७४ पौंड था। कोई बच्चा नही था। अनिष्ट और असमतोल आहार था। स्थूलता कम करनेके लिये पूर्ण चबाकर खाना, भोजन में या उसके बाद पानी पीना आदि उपचार किये। केवल पानी पीकर उपवास किया, पर वह छोडतेही वजन बढने लगा। आखिर मूत्रोपचार करनेवालेसे मिलने गयी।

हमेशाकी तरह स्वमूत्र पीना, उसके साथ आवश्यकतानुसार घूंट-घूंट पानी पीना, उपवास, बाह्यांगको मूत्रसे रगडना आदि उपचार चौदह दिन किये। १७४ से १४० पौंड तक वजन कम हुआ। उसके बात युक्ताहार दिनमें सिर्फ दुबारा भोजन और केवल स्वमूत्रोपचार जारी रखा। तब १४९ पौंड वजन कायम रहा कभी बढा नहीं।

जरूरतसे ज्यादा खानेपर स्थूलता बढती है ऐसा नही। विषैले अल्कली द्रव्यके कारण मांसग्रथियाँ ठीक काम नहीं देती है, तब यह बीमारी हो जाती है। इसके अलावा उपयुक्त अन्न का अभाव यह भी इस का एक कारण है।

स्वमूत्रोपचार, पानी पीना, उपवास और बाह्यांग मर्दन से अंग्लैंड में सैंक
लोगों का वजन कम हुआ है।

पुरुषोंके मूत्राशय के मुँहके पासवाली ग्रंथी की बीमारी

साधारणतया यह बीमारी बुढें पुरुषों को होती है। मूत्राशय रिक्त होने से पीडा होती हैं। जब मूत्राशय के मुँह के पासवाली ग्रंथी बढती तब पेशाब नहीं होता है और पीडा शुरू होती है।

एक वृद्ध आदमी को पेशाब नहीं हो रहा था। सुबह उठने पर एक पि स्वमूत्र पीना उसने शुरू किया। उसके बाद पचने में हलका नाश्ता ले लगा। एक महीने के बाद उसकी बीमारी ठीक हुई और पीडा बंद हुई

दमा या श्वासरोग

एक दमे का रोगी डॉक्टर के पास गया। श्लेश्मल त्वचापर सूजन थी डॉक्टरने क्षयरोग की प्रथमावस्था बतायी। रोगी अशक्त हुआ। नींदं क हुई। यह रोगी स्वमूत्रोपचार जानता था। पंद्रह दिन उसने स्वमूत्रोपचा पद्धतिसे उपवास किया। तीन दिनो में श्वासोच्छ्वास सुधरा। नींद अच्छी आ लगी। उसने सिर्फ मूत्रसे मर्दन नहीं किया था। पंद्रह दिनों के बाद उपवा छोड दिया। केवल दुबारा युक्ताहार और नियमित रूपसे स्वमूत्र प्राशन इतना ही उपचार जारी रखा। तोभी दीर्घकाल उपवास न रखनेसे उसक तबीयत फिरसे बिगड गयी।

फिरसे नियमित उपवास और मूत्रसे बाह्यांग मर्दन शुरू हुआ। उपवा के समय किस प्रकार का अन्न लेना चाहिये यह निश्चित हुआ। इस प्रका के उपवास से रुग्ण बिलकुल चंगा हुआ। उसके बाद बीचबीचमें उपवा रखनेपर उसको अपूर्व उत्साह मालूम होने लगा।

शरीर का कोई अंग सडना।

रुग्ण की उम्र थी ४०। पंद्रह सालकी अवस्थासे औषधोपचार जारी था शुरू में कई साल कंठग्रंथी और जुखामपर इंजेक्शन्स चालू थी। एकब ऑपरेशन भी हुआ था। पर तबीयत नहीं सुधरी। बीमारी असाध्य बताक

डॉक्टरने उपचार बंद किया। आखिर मूत्रोपचार करनेवालेकी शरण ली। उस समय हाथ की जख्मसे पीप निकलता था। वह हिस्सा सड रहा था। हात की त्वचा भी गायब थी। दोनों हाथ तोडने की बारी आयी थी। ऐसी भयंकर हालत में मूत्रोपचार शुरू हुआ। यह उपचार तीन हप्ते जारी था। पंद्रहवे दिन रोगी हाथ हिलाने लगा। स्वमूत्र प्राशन और में भिगोयी पट्टियाँ हाथको लपेटनेसे रोग नष्ट होने लगा। उसके साथ तीन हफ्ते नियमबद्ध उपवास रखनेसे पेटमें बारबार भरी हुअी दवाइयाँ बाहर निकल गयीं।

बाहूकी फुसियाँ :– एक मनुष्यकी बाहुपर बारबार छोटी फुन्सियाँ निकलती थी। सारे उपचार व्यर्थ रहे। उपवास न करके ही बाँह पर मूत्रमें भिगोयी पट्टियाँ रखना शुरू हुआ। तीन चार हफ्तोंमें फुन्सियाँ गायब हुई।

चेहरेपर आया हुआ बडा मस्सा : मूत्रमें भिगोयी पट्टी लगातार मस्सेपर रखनेके बाद मस्सा आपसे आप गिर गया।

हाथपर बढी हुई गाँठ :– एक आदमीके बाँहपर गाँठ बढ गयी। वह दिखनेमें गंदी और नीले रंगकी थी। उसकी ऊँचाई $\frac{1}{2}$ इंच थी। तीन हफ्तोंतक मूत्रमें भिगोयी पट्टियाँ गाँठपर बाँधनेपर वह आपसे आय गिर पडी। बाँहतर उसका कोई निशान भी न रहा।

एक अजीब बीमारी – इस रुग्ण की अवस्था ५८ साल की थी। रोगनिदान के लिये उसे अस्पताल में रखा गया। रोग असाध्य बताया गया। और रुग्ण को घर भेज दिया गया। उसके साथ कोई दवा दी गयी थी, जो अन्न में मिलाकर लेनी थी।

मूत्रोपचार करनेवालेने उसकी तबीयत देखी। अन्न में मिलाकर लेने के लिए जो दवा उस रुग्ण को दी गयी थी, वह विष था। उसके फलस्वरूप उसकी आँखों के कोये फूल उठे और वह रुग्ण दुबला हुआ। असल में बीमारीसे पहले वह सात्विक मिताहार लेनेवालाही था। उसको किसी

प्रकारकी बुरी आदतें नहीं थी। कभी जुखाम या खाँसी भी नहीं हुई थी। बद्धकोष्ठता नहीं थी। पित्त नहीं था। अतिसार की बीमारी भी नहीं थी। सूँघनी की आदत उसे थी, पर वह भी उसने बिमारी होने से पहले एक साल छोड दी थी।

मूत्रोपचार करनेवालेने उसकी जाँच की। मूत्रोपचार की अवधि में अगर कुछ बीमारी हुई तो घबराने की जरुरत नही ऐसे उसको और उसकी पत्नीको बताया गया। मुँह से या टट्टी से कुछ बाहर निकला, तो वह जाँच के लिये रखता था। तीसरे दिन याने मूत्रोपचार शुरू करने के ४८ घंटो के बाद बहुत बडी (दो बाल्टियाँ) उलटी हुई। उससे पेट हलका हुआ। नाक में से गंदगी बाहर आयी। बारह से अधिक रुमाल खराब हुए। वह गंदगी कत्थई रंग की थी। उपवास शुरू होनेपर दस दिनों के बाद नाक या मुँह से किसी प्रकारकी गंदगी निकलना बंद हुआ। इससे यह सिद्ध होता हैं कि मूत्रोपचार करते समय कौनसी बीमारी हुई है यह जाननेकी जरुरत नही होती। मेदमय धातुमें सुंघनी मिली हुई थी, वह मूत्रोपचार से नाक में से निकल गयी।

कामला :– लिव्हर की बहुत दिनोंकी शिकायत से कामला की बीमारी हो जाती हैं। यह स्वतंत्र बीमारी नहीं है। इसको दूर हटाने के लिये मूत्रोपचार पद्धति का दस दिनों का उपवास करना चाहिये। उपचार शुरू करनेपर तीसरे दिनसे सुधार दिखाई देता है। पीला रंग कम होने लगता है। दस दिनों के बाद त्वचा और आँखोंका रंग पूर्ववत हो जाता है।

फालिज :– साठ साल का फालिज से पीडित आदमी था। औषधोपचार के बाद थोडे दिनोंका मेहमान बताकर उसे घर भेज दिया गया। उसके बाद उसने स्वमूत्र और घूंट-घूंट पानी पीकर उपवास शुरू किया। इसके अलावा मूत्रसे बदन रगडना शुरू किया। इस प्रकार कुल साठ दिन उपचार किया। उसकी स्मृति वापिस आयी और वह स्पष्ट बोलने लगा।

बाल गिरना : उपरिनिर्दिष्ट साठ साल के आदमीको और एक बिमारी लगी थी। उसके सिरके बहुतसे बाल गिर गये थे। उपवास की अवधि में सिरपर भी मूत्र लगाया जाता था। फिरसे बाल आने लग। इतनाही बालोंका रंगभी

बदल गया। इस आदमी की तरह दूसरेभी कई व्यक्तियोंको इस उपचार से फायदा हुआ। यह बडे आश्चर्य की बात थी।

(१) छूत का शैत्यज्वर (२) फेफडे का ज्वर (३) फेफडों की त्वचा और आवरण का दाह (४) आँतोंकी सूजन

ऊपरवाली चारों बीमारीयाँ तीन से आठ दिनों के उपवास से ठीक हो जाती हैं। आँतो की सूजनवाले रुग्ण को केवल एक बार हलका भोजन दे सकते है। पर एक बात ध्यान में रखनी चाहिये कि हरबार होनेवाला पूरा मूत्र पेट में जाना चाहिये। एक बूंद भी गँवाना नहीं चाहिये। सूजन बहुत हो और बुखारभी हो तो एक बार भी अन्न न लेकर केवल मूत्र और पानी पीकर उपवास करना चाहिये। ताकद के लिये अन्न दिया जाता है। पर यह वह विष के समान है। स्त्री या पुरुष किसी को भी ऐसी हालत में अन्न वर्ज्य है।

मोतिया बिंद : इसमें कोयापर एक तरह का त्वचारूप आवरण आता है। मूत्र और पाणी पीकर उपवास करनेपर वह आवरण चला जाता है। फिर ऑपरेशनकी जरूरत नहीं पडती। कई रुग्णों को यह अनुभव आया हैं। कुछ रुग्णोंको यह आवरण निकाल देनेके लिए अधिक से अधिक अठ्ठाईस दिनोंका उपवास करना पडा है। आँख शरीरका ही एक अंग है। इसलिये दूसरी बिमारियों में पूरे शरीरपर मूत्रोपचार करते समय अगर उसी रुग्णको मोतियाबिंदू की भी बीमारी हो तो, उसी उपचार के कारण कोया का आवरण भी उस समय निकल जाता है।

आँखोंमें धुंध :– यह बडी बीमारी है। ऑपरेशन के सिवा हटती नहीं है। ऐसा डॉक्टरोंका मत है। ऑपरेश के बाद भी कुछ दिनोंसे अंधत्व आ ही जात, है। यह बीमारी नष्ट करनेका उपाय ऑपरेशन नहीं है। ऑपरेशन न करनेवाले रुग्ण और अगर एक महीनेके लिये स्वमूत्र और पानी पीकर उपवास करें तो उनकी बीमारी नष्ट हो जाती है। इसके सैंकडों उदाहरण है। इसके विपरीत ऑपरेशन करनेपर भी बहुतों को फायदा नहीं हुआ है।

संधिवात : लोगोंकी कल्पना है कि संधिवात अंग्लैंड जैसे ठंड देशोंमे अधिक होता है। रक्तमें अल्कली (खट्टेपनको निकलनेवाला क्षार) अधूरा होनेसे लोग यह आक्षेप लेते हैं। पर मानवी शरीरमें आम्लता (असिडिटी) और विजातीय पदार्थ रक्तमें घुल जाते हो तो जलवायुसे कुछ भी नहीं होता है। कहते है कि संधिवात के करीब छब्बीस प्रकार है। पर केवल दस-बारह दिनोंके मूत्र और पाणी पीकर कियें गये उपवास से रुग्ण चंगे हो जाते हैं उसके साथ मूत्रसे अंग मर्दन करना भी महत्त्वका उपचार है। इसके आलावा मूत्रमें कपडा भीगोकर शरीरको लपेटना भी आवश्यक है। नशीले पेय और मसालेदार चीजे वर्ज्य करनो चाहियें। १) स्वमूत्र प्राशन (Autogenous Self-generated २) मूत्रसे अंगमर्दन ३) मूत्रमें कपडा भिगोकर लपेटना ४) आवश्यकतानुसार पानी पीना, ये उपचार इस बीमारी में अत्यंत आवश्यक है।

हड्डियों के जोड में दाह निर्माण करनेवाली बीमारी : इस बीमारी मे विजातीय कुडाकरकर (डिपॉझिट) हड्डियों में इकठ्ठा होता है। बारह से चालिस दिनों में यह बीमारी स्वमूत्रोपचारसे नष्ट होती है। इस अवधिमे खानेमें परहेज रखना अच्छा होता है। स्वमूत्र पीना, मूत्रसे अंगमर्दन करना और मूत्र में भिगोई कपडे की पट्टियाँ शरीरको लपेटना, ये बाते इसमें मुख्य है। कई उदाहरण ऐसे भी है जिसमें बीमारी बहुतही बढ जानेपर मूत्रोपचार से कोई फायदा नहीं होता।

श्वास मार्ग का दमा : एक ३७ वर्षका आदमी नौदल में नौकरी करता था। उसको यह बीमारी थी। जब वह चौदह सालका था, तब उसका प्रादुर्भाव हुआ। सागरी हवा में वह हमेशा बेचैन रहता था। उसने हररोज तीन से चार पिंट स्वमूत्र पिना शुरू किया। लगातार तीन महीने उसने स्वमूत्र प्राशन किया। बीच-बीचमें ३० से ४० घंटे अवधि के उपवास भी किये। वह बिलकुल अच्छा हो गया। अब उसे गला धोने की (Steam Spray) जरूरत नहीं पडी।

इसी बीमारीसे पीडित रुग्णको नेचरक्युअर होम में चौदह दिनों का उपवास करकेभी कोई फायदा नहीं हुआ। उसके बाद उसने केवल चार दिन

स्वमूत्र और पानी पीनेका उपचार किया। फिर अपने स्वास्थ्य की परीक्षा लेने के लिये वह एक ऊँची पहाडी पर चढा, पर उसे कुछभी तकलीफ नहीं हुई। दूसरे दिनसे वह कामपर जाने लगा। मूत्रपिंड में दाहिनी तरफ का बिगडा हुआ मूत्रपिंड निकालने के लिये एक रुग्ण अस्पताल में दाखिल हुआ। बडी तकलीफ हो रही थी। मूत्र का रंग रक्त के समान था। एक्सरे की जाँच में पेडू में पथरी दिखाई दी। सर्जन ने कहा कि मूत्रपिंड सड गया है, ऑपरेशन करनाही पडेगा। रुग्ण ऑपरेशन के लिये तैयार नहीं था। उसके बाद उसने स्वमूत्रोपचार शुरू किये। कुछ हफ्तोंमें तबीयत सुधर गयी। बीच बीच में अल्पावधि का उपवास भी उस रुग्णने किया। उसके मूत्र का रंग बदल गया। तीन महींनों के बाद वह तबीयत दिखानेके लिये अस्पताल गया। डॉक्टरने उसे रोगमुक्त बताया। इस प्रकार और एक रुग्ण स्वमूत्रोपचार से अच्छा हुआ।

एक्सरे में देखकर जिनको ऑपरेशन आवश्यक बताया था ऐसे रोगीभी स्वमूत्रोपचारसे चंगे हुए हैं। फिरसे डॉक्टर की जाँच होनेपर इस बात की सत्यता मालूम पडती है।

गौरसे देखा जाय तो मालूम पडेगा कि जानवर अपने मूत्रको चाटते हैं। समचिकित्सा पद्धति (Homeopathy) के अनुसार यह उनका विष बाधापर (Toxic) किया गया उपचार है।

अगर भोजन के बाद हरबार नियमित रूपसे स्वमूत्र लिया जाय, तो अन्नसे उत्पन्न होनेवाले संभाव्य रोगों को रोका जा सकता है। रोगों के संसर्ग से मुक्त कर लेनेका (Immunixation) यह निसर्ग का दिया वरदान है।

कुत्तो को भी रोगमुक्त होने में निसर्ग मदद देता है। मानव की आविष्कार करनेवाली बुध्दि मानव के नाश का कारण बनती है। बकरी, भेड, बंदर आदि स्वमूत्र चाटते हैं। स्वस्थ बकरीका दूध क्षयके रुग्णों को देते है। मानव स्वमूत्र बरतन में लेकर पीता है। बकरी या भेड अपना मूत्र जैसे निकलता है, वैसेही पी लेती है (ऑटोजिनस)।

यह बात बिलकुल सच है कि भगवान ने मानव की उत्पत्ति करनेपर वह मर न पावे इसलिये निसर्ग में ही कुछ न कुछ उपाययोजना करके रखी है। अन्न, वस्त्र और घर की योजना ईश्वरने शुरूसे ही करके रखी थी। सिर्फ मानव को उन्हे 'परिश्रमसे प्राप्त कर लेना था। मानव की सेहत अच्छी रखने के लिये भगवानने उसकी उत्पत्ति के साथ ही कुछ न कुछ इन्तजाम किया होगा। प्रत्यक्ष अनुभव लेकर पाठकों को वस्तुस्थिति का ज्ञान करने के लिये ही यह प्रयत्न किया गया है। तबीयत को ठीक रखने का साधन हमारे पास ही है। बिना कुछ खर्च किये सब लोग उसका उपयोग आसानीसे कर सकते हैं। जॉन आर्मस्ट्रॉंग ने स्वानुभवपर आधारित अपने विचार और उपचार 'दि वॉटर ऑफ लाइफ' इस पुस्तक में हमारे सामने पेश किये है। यह उनका वैद्यक शास्त्र में किया गया मौलिक कार्य है। यह बात बडे बडे तज्ञ डॉक्टरों ने भी मान ली है।

१५

मामूली जुकाम, सरदी :– जिसको हम मामूली जुकाम कहते हैं, उसने डॉक्टरों को असमंजस में डाला है। एक डॉक्टरने मजे में कहा 'मैं मामुली जुकाम या सरदी का इलाज करने से ऊब जाता हूँ।' साधारणतया असमतोल आहार जुकाम का एक कारण है। जुकाम के लिये दवा लेनेकी अपेक्षा अगर वह यथावकाश आप से आप ठीक हो जाय तो अच्छा है। जोरकी सरदी के कारण अगर नाक में से लगातार पानी आ जाय तो बहुतही अच्छा है, क्यों कि उससे शरीर की खराबी बाहर निकल जाती है। जुकाम रोकने के लिये तुरन्त हवा लेते हैं। पर सरदी को एकदम रोकने से (Check) न्यूमोनिया जैसी बीमारी का डर रहता है। बहुतेरे लोगों को असमतोल आहार लेने से

सरदी की पीडा होती है। अन्न में पिष्टमय पदार्थोंकी (Starch) अधिकता और धातुधर्मयुक्त क्षारों का अभाव होने से जुकाम होता है।

जुकाम सबसे अच्छा इलाज है स्वमूत्र और ठंडा पानी पीना । दूसरे किसी औषध की आवश्यकता नही है । इस उपचार से निरोग आदमी की सरदी बारह घंटोके अंदर चली जाती हैं । केवल ठंडा पानी पीकर भी चौबीस से अडतालीस घंटो में जुकाम बिलकुल ठीक हो जाता है । पर स्वमूत्र और पानी पीनेसे सेहत पर अच्छा परिणाम होता है । इससे भी महत्त्व की बात यह है कि स्वमूत्रोपचार करनेपर इन्फ्ल्यूएंझा, न्यूमोनिया जैसी बीमरियाँ नहीं होती हैं। अगर ये बीमारियाँ कभी हो जायें, तो दस दिन स्वमूत्र और पानी पीकर उपवास करना चाहियें। इसके अलावा रुग्णकी शुश्रुषा करनी चाहिये । जुकाम दूसरी बीमारीयोंकी सूचना है। इसलिये जुकाम होनेपर स्वमूत्र और पानी पीकर उपवास करना चाहिये ।

यह समझना गलत है कि मैदेसे बनायी डबल रोटी, बिस्किट, पूडी, गेहुकी या बाजरेकी रोटी, चावल के आटेके मीठे पदार्थ आदि पिष्टमय पदार्थ खानेसे ज्यादा ताकत आती है । मद्यार्क चाय पीनेपर उत्साह बढता है, पर वह तत्कालिक होता है। इसलिये ये पेय नहीं लेने चाहिये ।

Carbon Food	निर्धातुक रासायनिक मूल्यतत्त्वयुक्त पोषक वस्तु.
Calcium Food	एक रासायनिक मलदोषक वस्तु.
Chlorine Food	एक हरे-पिले रंगकी गॅसयुक्त पोषक-वस्तु.
Floorine	
Sodium Food	सिंधयुक्त पोषक वस्तु.
Potassium Food	पालाशयुक्त पोषक वस्तु
Phospherous Food	(मूलतत्त्वका ज्वालाग्राही घनपदार्थ) स्फुरदयुक्त पोषक वस्तु
Sulphur Food	गंधकयुक्त पोषक वस्तु

उपर के आठ तरह के सॉल्ट्स जिन चीजों में होते हैं; ऐसी चीजें सेहत के लिये खानी चाहिये। इसका मतलब यह है कि विविध प्रकार का युक्ताहार ले कर अनिष्ट भोजन करना चाहिये।

१६

स्वमूत्रोपचार के संबंध मे महत्त्वकी सुचनाएँ

१. अगर स्वस्थ्य पुरुष या स्त्री और छोटे लडके और लडकियाँ सुबह-सुबह होनेवाले स्वमूत्र का प्राशन करेंगे तो उनका स्वास्थ्य हमेशा अच्छा रहेगा।

२. उपवास की अवधि में रुग्णको अपना सारा मूत्र (२४ घंटों में जितना हो सके उतना) पीना जरूरी है। उस समय मूत्रसे अंगमर्दन करके शरीर में उसे सोखा जानेकी आवश्यकता होती है। ऐसी हालत में मर्दन के लिये पुरुष रूग्ण के लिये पास के स्वस्थ्य पुरुषका और स्त्री-रुग्ण के लिये स्त्री का मूत्र लेना चाहिये। वह सात दिनोंका बासा होना चाहिये। इसलिये इस्तेमाल करने के पहले ७ दिन उसे जमाना पडता है। रोज एक के हिसाब से सात दिनों में सात बोतलें भरनी चाहिये। फिर आठवे दिन पहले दिनवाली बोतल से रगडने के लिये मूत्र लेना चाहिये और उसकी जगह फिरसे बोतल भरनी चाहिये। इस क्रम से उपवासकी अवधि में बासे मूत्र से अंग रगडना जारी रखना चाहिये।

३. शिवांबुकल्प विधी के अनुसार काढेकी तरह तांबे के या मिट्टी के बरतन मे मूत्र लेकर उसको $\frac{1}{4}$ हिस्सा रह जाय इतना औटाना चाहिये। पाश्चात्य पद्धति में सात दिनोंका बासा मूत्र शरीर मर्दन के लिये लेते है, उसी प्रकार औटाया हुआ मूत्र शरीर मर्दन के लिये लेना चाहिये। शरीर

रगडते समय इस औटाये हुए ($\frac{1}{4}$ हिस्सा रहने तक) मुत्रको फिरसे गरम करनेकी जरूरत नहीं है। ठंडे मूत्रसे रगडनेपर भी शिथिलता नहीं आती हैं।

(४) (अ)आँखोंकी और कानोंकी बीमारी के लिये ताजे मूत्र की अपेक्षा चार दिनोंका बासा मूत्र अच्छा होता है। हररोज एक के हिसाबसे चार दिनों में चार बोतलें भरनी चाहिये। पाँचवे दिनसे क्रमसे एक एक बोतल का उपयोग करना चाहिये। दिन में दो-तीन बार आँखो में मूत्र डालना चाहिये और उसी मूत्र में कपडे की पट्टियाँ भिगोकर सुबह और शाम को कमसे कम १५ मिनिट आँखोंपर रखनी चाहिये।

(ब) कान पक जानेपर उसमें से कुछ स्राव बहने लगता हैं। तब उसको बासे मूत्रको पिचकारिसे डालकर धोना चाहिये। फिर चार दिन बासे मूत्रमें भिगोया रूईका फाया कानमें रखना चाहिये। उसपर बार बार बूंदें छोडकर उसे गीला रखना चाहिये।

५. सेहत जल्दी अच्छी होने के लिये उपवास (ताजा स्वमूत्र और साफ ठंडा पानी पीना) अत्यंत आवश्यक है। बिना उपवास के बीमारी तुरन्त नष्ट नहीं होती। उपवास सहन करने की ताकत न हो तो हफ्ते में लगातार दो दिन, या गुरूवार और रविवार कों या कमसे कम एक दिन उपवास करना चाहिये। अगर यह भी असंभव हो, तो रात को कुछ न खाना (एकभुक्त रहना) ठीक रहेगा।

६. क्षयसे पीडित या अशक्त व्यक्ति को उपवास नहीं करना चाहिये। उसको एक बार खाना चाहिये। (एक भुक्त)

७. आठ दिनों के बासे मूत्रमें या औटाये हुए ($\frac{1}{4}$ हिस्सा रहनेतक) मूत्र में काली, सफेद या लाल मिट्टी मिलाकर उसका लेप शरीर के जिस भागमें दर्द हो उसपर लगाना चाहिये। उदाहरण के लिये अल्सर, कॅन्सर किडनी, गर्भाशय, पेटका दर्दभरा भाग, घुटने, अपेंडिसायटिस, स्पायनलकॉर्ड छातीका दर्दभरा भाग, और अन्य दर्दभरे भागोंपर जहाँ जहाँ हो सके वहाँ यह लेप लगाना चाहिये। लेप लगा ने के बाद करीब डेढ घंटा लेटना चाहिये। लेप सूख जानेपर गीले कपडेसे उस भागको पोंछना चाहिये। फिर

नहाने की जरूरत नहीं। लेप पाऊण इंच मोटा होना चाहिये। अगर हो सके तो यह क्रिया दिनमें दो-तिन बार करनी चाहिये। हरबार लेप के लिये नयी मिट्टी लेनी चाहिये।

८. स्वमूत्र प्राशन के बाद भी टट्टी न हुई, तो जमाया हुआ मूत्र थोडासा गरम करके उसका एनिमा लेना चाहिये।

९. खाँसी रोकने के लियें स्वमूत्रोपचार के साथ-साथ ताजे मूत्र से बार-बार कुल्ला करना चाहिये। मगर गला बैठ गया (क्लरजिमन्स थ्रोट) तो ताजे मूत्र से कुल्ला करना चाहिये। स्वमूत्र पीना भी चाहिये। फौरन आराम पडता है।

१०. सिरदर्द, आध कपाली, नाक के रोग आदि के लिये स्वमूत्रोपचार के साथ हररोज-सुबह ताजे मूत्र से नस्य करना चाहिये।

११. शरीर के जले हुए भागपर, ब्लिस्टर्स आये हुये भागपर या सोरायसिस आये हुये भागपर मूत्र में भिगोयी पट्टियाँ रखना कठीन हो तो शुरू में पंप से उन भागोंपर मूत्रका स्प्रे करना चाहिये। इस समय रुग्ण का मूत्र मिलना कठिन होता है। इसलिये क्रमांक २ में बताये अनुसार अन्यव्यक्ति का मूत्र लेना चाहिये।

१२. शरीर को मसाज करने के लिये आठ दिनों का बासा मूत्र या औटा-कर 1/4 किया गया मूत्र लेना चाहिये। पैर से शुरू करके सिरतक हरएक भागपर कम से कम दस मिनिट मसाज करना चाहिए। इस प्रकार मर्दन के लिये कमसे कम डेढसे दो घंटे लगते है। गर्दन और स्पायनल कॉर्ड को भी स्वतंत्ररूप मालिश करना चाहियें।

१३. अगर कोई बीमारी हो, तो उपवास न करनेपर भी बीमार आदमी को सुबह, दुपहरके और रात के भोजन के एक घंटा बाद स्वमूत्र पीना चाहिये।

१४. साधारणतया करीब पचास सालकी अवस्थावाले स्त्री-पुरुषोंको रात को सो जाने पर बीच में उठकर पेशाब को जाना पडता है। उस समय और हमेशाकी तरह सुबह सुबह स्वमूत्र पीना चाहिये।

१५. स्वमूत्र प्राशन शुरू करनेपर जैसे भला-बुरा अनुभव प्राप्त होगा उसके

अनुसार स्वमूत्र कब और कितना लेना चाहिये इसके बारे में आदमी तय कर सकता है। इसके लिये कुछ खास नियम नही है।

१६. स्वमूत्रोपचार शुरू करनेपर पहले बताये अनुसार परहेज रखना चाहिये। अनिष्ट और अतिशय खाने के कारण सब प्रकार के रोग निर्माण होते है। जो जीभ काबू में रखता है वह दुनिया जीत सकता है। हमेशा मुक्ताहार लेना चाहिये।

१७. दिन में (२४ घंटे) कम से कम एक लिटर पानी पीना आवश्यक है।

आगे कुछ रोगों के नाम ओर उपचार की सूचि दी है।

	बीमारीका नाम	ताजा स्वमूत्र सुबह, दुपहर के और रातके भोजनके एक घंटा बाद पीना (उपवास हो तब)	८ दिनका बासा या औटाकर १/४ रखा हुआ स्वमूत्र पूरे शरीर में मालिश करके सोखाना। या	८ दिनोंके बासे या औटाकर १/४ रखे हुए स्वमूत्र में कपडे की पट्टियाँ भिगोकर जहाँ जरूरत हो वहाँ लपेटकर रखना। या	बासे या औटाकर १/४ रखे हुए स्वमूत्र में काली, लाल या सफेद मिट्टी मिलाकर गीला लेप करके दर्दभरे भागपर लगाना।	(बीमारी देखकर) ३ या उससे अधिक दिन या हफ्ते में एक दिन या एक भुक्त रहकर ताजा स्वमूत्र और पानी पीकर उपवास करना
Gangrene	शरीरका अंग सडना	,,	,,	,,		,,
Growths	विषैली चीज बढना	,,	,,	,,	,,	,,
Bright's disease	मूत्रपिंडके रोग	,,	,,	,,		,,
Heart disease	हृद्रोग	,,	,,		,,	,,
Fever	बुखार	,,	,,			,,
Malaria	शीतज्वर	,,	,,	,,		,,
Black fever	काला ज्वर	,,	,,	,,		,,
Orchitis	अंड और इंद्रिय वृद्धि	,,	,,	,,		,,
Cuts (wounds)	घाव	,,				
Menstrual trouble	ऋतुस्रावकी पीडा	,,				

Nephritis	मूत्रपिंड दाह	,,			,,	,,
Obesity	मोटापन (स्थूलता)	,,	,,			,,
Jaundice	कामला	,,	,,			,,
Cataract	मोतिया बिंदू	,,	,,			,,
Diseased kidney	व्याधिग्रस्त मूत्रपिंड	,,	,,			,,
Heart asthama	हृदयका दमा	,,	,,			,,
Heart weaknes	अशक्त हृदय	,,	,,			,,
High blood pres.	अति रक्तदाब	,,	,,		,,	,,
Low blood pres.	कम रक्तदाब	,,	,,		,,	,,
Bone Tubercu	हड्डी-क्षय	,,	,,			,,
Lungs ,,	फेफडेका क्षय	,,	,,			,,
Cough	खाँसी	,,	कुल्ला करना	,,	,,	,,
Cold	जुकाम		मसाज	,,		,,
Eosinophilia	दमेकी जैसी बीमारी	,,	,,		,,	,,
Infantile Cold	बच्चोंका जुकाम	,,	,,			,,
,, Congh	बच्चोंकी खाँसी	,,	,,			,,
Whooping ,,	कुकुर खाँसी	,,	,,		,,	,,
Uterus inflama-tion internal	गर्भाशय को सूजन या इजा	,,	,,	,,	,,	,,
Body Inflama	शरीरको सूजन	,,	,,	,,		,,

Chronic fever	पुराना बुखार	,,	,,		,,	,,
Influenza	छूतका शैत्यज्वर	,,	,,		,,	,,
Asthama	दमा	,,	,,		,,	,,
Tongue cancer	जीभका व्रण	,,	जिभपरपट्टी. मसाज		,,	,,
Throat ,,	गलेका व्रण	,,			,,	,,
Stomach ,,	पेटका व्रण	,,	,,	,,	,,	,,
Stomach disease	पेटकी बीमारियाँ	,,	,,		,,	,,
Hyperacidity	अति अम्लता	,,	,,	,,		,,
Stomach ache	पेटमें दर्द	,,	,,		,,	,,
Constipation	बद्धकोष्ठता	,,	,,	,,		,,
,, Chronic	पुरानी बद्धकोष्ठता	,,	,,			,,
,, Permanent	कायम बद्धकोष्ठता	,,	,,			,,
Indigestion	अपचन	,,	,,			,,
Constipation	अग्निमांद्य	,,	,,		,,	,,
Dropsy	असाध्य जलोदर	,,	,,		,,	,,
Ulcer	व्रण (क्षत)	,,	,,	,,	,,	,,
Sprue	संग्रहणी	,,	,,	,,		,,
Intestine trouble	आँतों में बिगाड	,,	,,			,,
Kidney disease	मूत्रपिड में बिगाड	,,	,,			,,
Nephritis	मूत्रपिडमें दाह	,,	,,	,,	,,	,,

Urination obstr.	मूत्रमार्गमे बाधा	”	”			”
” Trouble	मूत्रहोनेमें बिगाड	”	”			”
” Disorder	मूत्रमें बिगाड	”	”			”
Pain in urine	मूत्रमार्गमें दाह					
Diabetis	मधुमेह	”	”		”	”
Vertibral column stiffness	रीढकी हड्डियोंमें तनाव	”	”	”	”	”
” Swelling	” ” सूजन	”	”	”	”	”
Gout	संधिविकार	”	”	”		”
Blisters	बदनपर उठनेवाले फोडे	”	”	”		”
Ringworm	दाद	”	”	”	”	”
Netıle rash	पित्तकी चकतियाँ	”	”	”	”	”
Eczema	एक्जीमा	”	”	”		”
Leprosy white	श्वेतकुष्ठ	”	”	”		”
” degenerative	महारोग, कोष्ठ	”	”	”	”	”
Psoriasis	त्वचापर सफेद चकलियाँ उठना	”	”	”		”
Eye disease	नेत्ररोग	सुचना देखो	”			”
Ear trouble	कर्ण रोग	”	”			”
Headache	सिरदर्द	”	”	”		”
Elephantoiris	हाथीरोग	मसाज	”	”	”	”
Piles	बवासीर	”	”	”		”

१७

जानवरोंपर करनेके उपचार

एक आदमीको घोडे और कुत्ते पालनेका शौक था। वह आदमी उन जानवरोंकी बीमारियों के लिये मूत्र और गाय के गोबर का उपयोग करता था। उन जानवरोंको एक एक महीना गोमूत्र और पानी पिलाकर वह उनकी बीमारियाँ दूर करता था। प्यास लगनेपर वे जानवर आप पानी पीते थे। पर गोमूत्र पिलाते समय खोसले मीगमें से उनके गलेके नीचे वह डालना पडता था। एकबार उसकी गाय को धनुस्तंभ की बीमारी हुई। उसको एकसौ बीस दिन केवल गोमूत्र और पानी पिलाया गया। अन्य गायोंका मूत्र बाटली में जमा कर हररोज आठ आठ घंटे उस रोगी गाय का उस गोमूत्र से अंगमर्दान किया गया। पीने के लिये उसका और दूसरी गायोंका मूत्र दिया गया। उस गाय का मूत्र गाढा, पीला और तीव्र था। उसके शरीर के बाल बाल गिर गये। केवल हड्डियाँ और चमडी रह गयी। पर उपर के उपचारसे गाय दो महीनों के अंदर अच्छी हो गयी।

कुत्ता कुत्तीका मुत्र चाटता हैं। वह अपना मूत्र नहीं चाट सकता। इसलिये उसको पेड से बाँधकर उसके सिरपर उसीके मूत्रकी बौछार करते है। जब वह मूत्र सिरपर से नोचे आता हैं, तब वह उसे चाटने लगता है। जानवर जब तक बीमार रहते हैं, जब तक कुछ खाते नहीं है। एक एरिडर किस्मका टेरिअर कुत्ता एक बार मोटर की दुर्घटना में आ गया। उसके पेटपर सूजन आयी। फिर मानव का मूत्र उसको ऊपर की स्प्रे पद्धति से पिलाया और उससे उपवास करवाया। बीसवे दिन उसको कच्चे मटन का टुकडा खिलाया। बीमारी में उसका शरीर उग्र, तेलिया और खराब हुआ था। उसको मूत्र से साफ किया जाता था। उसके कारण उसके पुराने बाल गिरनेपर नये आ गये।

मुर्गियों के लिये भिन्न उपचार किये जाते है। क्योंकि मुर्गियाँ पेशाब नहीं करती है। इसलिये उनपर मूत्रोपचार नहीं किया जा सकता। इनको खाना न देकर केवल पानी दिलाया जाय तो आश्चर्यजनक बातें होती हैं।

एक आदमीने ६० मुर्गियाँ पाली थी। पर वे अंडे नहीं देती थी। वे दृष्ट-पुष्ट थी। उनमें से कुछ मुर्गियाँ बीमार पडीं। उन बीमार मुर्गियों-को केवल पानी पिलाया गया। आश्चर्यकी बात यह हुई कि उन बीमार मुर्गियोंनें चौथे दिन अंडे दिये। शेष मुर्गियों को बीमार न होनेपर भी तीन दिन पानीपर रखा गया। उन्होंने भी बहुत अंडे दिये। उन सब मुर्गियों को फिरसे एक बार केवल पानी दिया गया और उसके बाद गेहुँ का खुराक दिया गया। फिर वे बगीचे की मुलायम घास खाने लगीं। साठ मुर्गियों से हर हफ्ते ढाईसौ अंडे मिलने लगे। इसप्रकार आठारह हफ्ते मुर्गियोंने नियमित रुपसे अंडे दिये। हर मुर्गीके पीछे सिर्फ पाँच पैसे खर्च लगा। एक घोडीका अल्लड बछेडा तार का काँटेदार घेरा काँट रहा था, तब उसका पैर कट गया। मौस बाहर निकला। व्हेटर्नरी अस्पताल में न जाकर घाव को साफ किया गया। उसके उपर ऊनी कपडेकी पट्टी रखकर उसपर गोबर का गोला रखा गया। उसके उपर लकडी की बिलकुल पतली पट्टी रखकर फिरसे कपडेकी पट्टी से पैर अच्छी तरह बाँधा गया। उद्देश्य यह था कि गोबर का गोला न गिरे। बछडे को उछेलने-कूदणे के लिये छोडा जाता था। उसे पास लेकर गोबर के गोलेको दिन मे दो बार मूत्र से भिगोया जाता था। यह उपचार पंद्रह दिन जारी था। उसकेबाद बँडेज निकाला गया। आश्चर्य की बात! घाव अच्छी तरह भर आया था। पैरपर घाव का निशान तक न रहा। निसर्गोपचार में यह बात ध्यान में रखने लायक है। इसलिये मानवको निसर्गनियमों के अनुसार चलना चाहिये। क्यों कि निसर्ग हमारी मदद करता ही है।

१८

मूत्रमें भिगोये कपडे की पट्टिया लपेटना ।

शरीर की त्वचा एक इंद्रिय है । अगर प्याले में थोडा दूध रखा जाय और प्याले के मुँहपर कपडा तान के बाँधकर उसे उलटा पकडा जाए, तो दूध कपडे में से चूने लगता है । इसके उलटे प्याले का मुँह कपडा तान के बाँधकर कपडे पर थोडा दूध डाला जाय तो वह प्याले में चूने लगता है । यह चूने की क्रिया कपडेपर उँगलियाँ फेरने से जल्दी होती है । उसी प्रकार मानव की त्वचापर पतला पदार्थ रगडने से वह शरीर के अंदर चूने लगता है । शर्ट के अंदर जालीदार बनियन पहनी जाती है । क्यों कि शरीर की त्वचा से भी श्वासोच्छ्वास होता है । त्वचा के पास का कपडा जालीदार होने से उस में बाधा नहीं आती ।

अभिनय को प्रभावशाली बनाने के लिए नाटक में काम करनेवाले एक लडकेने अपने शरीरपर सुनहरा मुलम्मा लगाया । दो घंटों के अंदर वह लडका मर गया । इसके विपरीत बिल्कुल अशक्त लडके की त्वचापर दूध रगडनेसे उसका सुपरिणाम दिखाई देता है । रगडनेसे उष्णता पैदा होती है जिससे शरीर के छिद्र खुले होते है । फिर उष्णता फैल जाती है ।

मूत्र में भिगोये कपडे से शरीर दबाना और मूत्र से त्वचा रगडना ये उपचार बहुत अच्छे है । पुराना जमाया मूत्र थोडासा गरम करके उसमें कपडा भिगोकर पीडित अंगपर वह दबाना बडा गुणकारी है । रगडने की उपयुक्त पद्धती यह हैं । बोतल में मूत्र जमाकर उसमें से थोडा उथले बरतन में लेना, उसमें दोनो हथेलियों को भिगोना और थोडासा मूत्र हथेलियोंपर लेकर शरीर को इस प्रकार रगडना जिससे शरीर में मूत्र सोखा जाय और हथेलियों का गीलापन चला जाय । लगातार इसी प्रकार करना चाहिये । इस कृति में मूत्र जमीनपर या इधर उधर नहीं गिरता हैं ।

शरीरका जो भाग व्याधिग्रस्त है उसपर मूत्रमें भिगोया कपडा रखना चाहिये और उस कपडेपर थोडा मूत्र डालकर उसे गीला रखना चाहिये ।

फुन्सियाँ, शरीरका जुला हुआ भाग, घाव, फुला हुआ भाग (Lump) सूजन (Sweling) आदि पर मूत्रसे भिगोये कपडेकी पट्टी रखनी चाहिये। जहाँ पट्टी लपेटना, या दबाना (Compress) उपयुक्त है, वहाँ रगडना ठीक नहीं है।

शरीर मर्दन के समय गर्दन, चेहरा और पैरोंको भी मूत्रसे रगडना अच्छा है। मूत्र और पाणी पीकर जब उपवास रखते है तब मूत्र से अंगमर्दन करना आवश्यक है।

शरीर की त्वचा के लिये मूत्र जैसा दुसरा अन्न नहीं है। मर्दन करनेवाले लोगोंके हाथ देखनेपर इसकी सत्यता मालूम पडती है।

कहते है कि निरे ठंडे पानीसे शरीर मर्दन करना उपयुक्त है। पर यह बिलकूल झूठ है। स्वमूत्रोपचार करनेवालोंने इसको सिद्ध किया है। मूत्रसे अंगमर्दन न करनेपर काम न करनेवाले शरीरघटक घातु (Wasted tissues) फिरसे कार्यक्षम बनते है।

अगर अशक्त मनुष्य शरीरमर्दन न सह सके, तो उसका शरीर मूत्र में भिगोये कपडेसे लपेटना ठीक रहेगा। इससे हृदयकंपन (Palpitation) रूक जाता है।

१९

राष्ट्रीय आरोग्यकी दृष्टीसे सबको काफी पौष्टिक आहार, रहने के लिये घर, पीनेका स्वच्छ पानी मिलना और आरोग्यरक्षा का इन्तजाम होना आवश्यक है। अधूरे और जीवनसत्त्वहीन आहार के कारण क्षय जैसी बीमारियाँ निर्माण होती है। भुखमरी के अनेक कारणों में से पैसे का अभाव यह एक कारण है।

जिसमें पौष्टिकता कम है ऐसा अन्न बहुत खानेसे बीमारी होती है। थोडे में पोषक अन्न का अभाव और अनावश्यक अन्नका सेवन, ये बाते बीमारी

पैदा करती है। अन्न के दोषोंके कारण ही तबीयत बिगड जाती है। इसका मतलब यह है कि प्रतिकूल, अधूरा और असमतोल अन्न रोगबिजों के लिये अनुकूल है। कौनसा अन्न खाना चाहिये, कौनसा नहीं खाना चाहिये, इसके बारेमें खास नियम नहीं बता सकते। क्यों कि आबोहवा आसपासकी परिस्थिती, वैयक्तिक रुचि और तबीयत, इन बातोंका मुख्यतया विचार करना पडता है।

उत्तरध्रुव और विषवृत् रेखापर रहनेवाले लोगोंके खाने-पीनेकी पद्धतिमें फर्क रहना स्वाभाविक है। उसका मुख्य कारण आबाहोवा वैयक्तिक विशिष्ट तबीयत के अनुसार इन लोगोंके आहारमें अलग अलग पद्धतियाँ आ जाती है।

कभी कभी एकाध आदमीको मछली नहीं भाँती है। अगर ऐसे आदमीने डाकका टिकट अपनी जीभपर रखकर पत्रको चिपकाया, तो उसके चेहेरेपर सूजन आती है। क्यों कि टिकटपर चिपकाने कें लिये जो लसीला पदार्थ लगाया जाता है, वह मछलीसे बनाते है। कुछ लोगोंको किसी भी हालतमें अंडा अच्छा नहीं लगता। एक स्त्रीने सत्तर सालकी अवस्थातक अंडेको छुआ तक न था। उसके बाद उसको अंडा भाने लगा।

शाकाहारी लोग कहेंगे कि बीमारी का कारण मांसाहार है। पर यह बात सच नहीं है। किसी आदमी को अगर जनम से मांसाहार से दूर रखा जाय तो समतोल आहार से उसकी तबीयत अच्छी रह सकती है। सिर्फ पिष्टतत्त्व के पदार्थ ज्यादा नहीं खाने चाहिये।

प्रश्न :- शीलोष्ण कटिबंध के लोगोंको कौनसा आहार लेना चाहिये ?

उत्तर :- योग्य प्रमाण में मांस, मुर्गी के अंडे, मछली, कच्चा साग (Salad) पकाया हुआ साग, गेहूँकी रोटी, मौसमी फल, बिना काँडे हुए चावल, मक्खन और शहदे।

हवाबंद डब्बे के फल या अन्न, गरम किया हुआ बासा अन्न प्रक्रिया (Processed) किया हुआ अन्न, मैदेकी उबल रोटी, सफेद बारीक शक्कर काँडे हुए चावल, पाश्चर्ड दूध, मसाले (Condiments) आदि नही खाने चाहिए।

हवाबंद डब्बेका मांस, प्रक्रिया किया हुआ अन्न, पॅश्चराईज्ड दूध आदि पदार्थ सेहत को हानी पहुँचाते है। सफेद बारीक शक्कर से क्षार निर्माण होते है। क्योंकि अॅसिड लगाकर उसको तैयार करते है। उसमें से सारे अल्कलाइन गुणधर्म नष्ट किये जाते है। पॅश्चराइज्ड दूध बडा घृणास्पद होता है। उसका ताजापन नैसर्गिक नहीं होता। वह दूध अच्छी तरह नहीं तपाते। वह पौष्टिक नहीं होता। अगर वह दूध बछडों को पिलाया जाय तो बछडे मर जाते है। अगर चूहों को पिलाया जाय तो उनसे प्रजोत्पत्ति नहीं होती। संततिनियमन के लिये उसका अच्छा उपयोग होता है।

नॅच्युरोपॅथ्स जीवनावश्यक पदार्थों के आहार को महत्त्व देते है। आहार योजना शास्त्रके संबंधमे विचार करते समय इन नॅच्युरोपॅथ्स के विचारोंको प्राधान्य देना पडता है। 'व्हायटल' शब्दसे 'व्हिटॅमिन' शब्द आया। पर मनुष्य के लिये आवश्यक जीवनसत्त्वोंका निर्माण व्यापारी दृष्टीसे होने लगा। तबसे बाजारमें कृत्रिम (आर्टिफिशल) जीवनसत्त्वों की भरमार होने लगी। जीवनावश्यक चीजे नियमीत भोजनसे मिल सकती है। भोजन में शक्कर स्टार्च बिलकुल वर्ज्य करना गलत है, इस बातपर शास्त्रज्ञ सहमत नहीं होंगे। आहार में ज्यादा स्टार्च का होना बुरा है। नियमीत और युक्त आहारसे (ज्यादा नहीं, कम नहीं) बीमारीको रोक सकते हैं। इसके अलावा बीच बीच में मूत्र और पानी पीकर उपवास करना चाहिये। सुबह एक गिलास और दिन में और एक गिलास स्वमूत्र पीना चाहिये। एक सज्जन चौबीस घंटों में थोडा थोडा स्वमूत्र नियमितरूपसे पीते थे और इसके सिवा ताजा दूध भी पीते थे। नशीला पेय वर्ज्य करना चाहिये। सच पूछो तो दुबारा भोजन की आवश्यकता नहीं है। एक बारके भोजनसे सेहत बहुत अच्छी रहती है।

अगर भोजन में कुछ बदल करना हो, (याने मांसाहार के बदले शाकाहार शाकाहार के बदले मांसाहार) तो उपवास की अवधि पूरी होने के बाद करना चाहिये।

जहाज के टूटने के बाद खलासी लाईफ बोटमें प्रवास शुरू करते है। उस समय उनके पास मीठा पानी न होनेसे वे स्वमूत्र पीते हैं। एक बार ऐसी हालतमें स्वमूत्र पीकर भी कुछ खलासी मर गये। तोभी मुख्याधिकारीने बताया कि स्वमूत्र पीना हानिकारक नहीं है। उन खलासियों के मरने का कारण

था अन्न का अभाव और परिस्थिति का दबाव। क्यों की उनमें से कुछ हिम्मतवाले खलासी स्वमूत्र पीकर बच गये।

उपवास के बारे में और एक उदाहरण है। किसी आदमी की आँख के कोये के मधुमक्खीने काटा। आँख में अॅट्रोपिन डालकर उपचार किया गया। पर कुछ फायदा नहीं हुआ। उसके बाद उस आदमीने स्वमूत्र और पानी पीकर एक सौ एक दिन उपवास किया। इसके अलावा पुराने जमाये हुए मूत्र से अंगमर्दन किया। आश्चर्य की बात है कि उसकी आँख बिलकुल ठीक हो गयी। ऐसा है स्वमूत्रोपचार का प्रभाव।

२०

कुछ मौलिक सूचनाएँ

जिनको हम सुधार कहते हैं वे प्रत्यक्ष अनुभव में निरूपयोगी सिद्ध हैं। कॅन्सर की बीमारी पर रेडियम ट्रिटमेंट और सर्जरी, ये दो उपचार प्रभावशाली माने जाते हैं। दोनों उपचार बहुत खर्च के होते है। इसके सिवा वे निश्चितरूपसे गुणकारी होंगे या नही यह बता नहीं सकते। डॉक्टर भी इस बीमारीके बारेमें असमंजस में पडते हैं। उनके घरका कोई व्यक्ति कॅन्सर से बीमार हो तो उपचार करते समय उनका मन साशंक होता है। फिर कभी कभी उनको प्राचीन (अन ऑर्थोडॉक्स) उपचार करना पडता है। एक प्रसिद्ध सर्जनकी ४७ सालकी बहन थी। उसके स्तनपर गाँठ आयी, वह हृदयविकार से भी पीडित थी। इसलिये गाँठ का ऑपरेशन करना कठिन था। वे सर्जन अपनी बहन को एक होमिओपॅथ के पास ले गये और कहा 'आपकी पद्धति से बहन का उपचार कीजिये।' उस पद्धतिसे उसकी बीमारी नष्ट हुई। इसपरसे कहा जा सकता है कि ऑपरेशन या रेडियम

ट्रीटमेंट के सिवा होमिओपॅथी के औषधोपचारसे कॅन्सरकी बीमारी हट जाती है तो उसपर मूत्रोपचार का उपाय भी कर सकते हैं। ऐसा कोई कायदा नहीं है कि कॅन्सर के लिये ऑपरेशन या रेडियम ट्रीटमेंट ही लेनी चाहिए।

सवाल यह है कि वैद्यकीय व्यवसाय राष्ट्रकी भलाई के लिये है। या डॉक्टर के फायदे के लिये है? इसका जवाब है कि यह व्यवसाय राष्ट्रकी भलाई के लिये है। डॉक्टर के साथ भी लोगोंका बरताव सौज्यन्यपूर्ण चाहिये। अनुभव यह है कि जीवित रहनेवाले रोगी डॉक्टर्स के फायदे के लिये जीवित रहते है।

अगर प्रचलित उपचारोंपर से विश्वास हट जाय तो स्वमूत्रोपचार करने में क्या हर्ज है। अगर रोगीने यह उपचार शुरू किया, तो डॉक्टरों के व्यवसाय-पर परिणाम होगा, यह एक अडचन है।

इसमें महत्त्वकी बात यह है कि किसी डॉक्टरने रोगी की अनुमतिसे प्रयोग के तौरपर उसपर मुत्रोपचार शुरू किया, तो उसके साथ साथ उसको किसी प्रकार का अन्य उपचार नहीं करना चाहिये। दो उपचार साथ साथ करने से रोगी रोगमुक्त नही होगा। यह त्रिवार सत्य है। मूत्रोपचार यह निसर्गोपचार है। उसके साथ साथ निसर्ग को मान्य न होनेवाला उपचार नहीं करना चाहिये। क्यों कि ऐसा करने से भयंकर परिणाम होगा। मूत्रोपचार की अवधि में डॉक्टर की निगरानी जरूरी है। अगर यह मौका डॉक्टर मिले तो उसमें बुरा मानने की जरूरत नहीं। यह बात डॉक्टरके लिये अपमानकारक नहीं है। मूत्रोपचार यह आधुनिक काल का प्राचीन उपचार है। आशा है कि थोडे दिनों में इसके केंद्र स्थापित होंगे। उस जगह डॉक्टर्स और परिचारिकाएँ भी होंगी। मूत्र से अंगमर्दन भी किया जाएगा। स्वमूत्रो-पचार के लिये कुछ खर्च नहीं आता। गरीब तथा अमीरों के लिये यह बिलकुल सरल और सुलभ उपचार हैं। बहुतसे रोगी अपने अपने घर अपने पासवालोंकी मदद से मूत्रोपचार करवा लेते है। क्यों कि इसके लिये एक पैसा भी खर्चने की जरूरत नहीं पडती। मूत्रोपचार केंद्र शुरू होने से रोगियों को फायदा होगा। डॉक्टरों को भी उन केंद्रोंकी देखभाल करना आसान होगा।

२१

मानव एक रहस्य है।

'सच पूछो तो अंतर्मुख होकर शांत चित्त से विचार करनेपर भी हमें कुछ समझ में नहीं आता है। यह बडे दुख की बात है'। एक बडे विनयशील और विद्वान सज्जन का यह कहना है। यही बात दूसरे ढंग से कह सकते है किसी विषय का ज्ञान प्राप्त करने के लिये जैसे जैसे हम अधिकाधिक मेहनत करते है, वैसेवैसे विचार करनेपर हमको अपने अज्ञान और अपूर्णता का पता चलता है।

'मानव' यह एक अगम्य; अतर्क्य परमेश्वरकी बनायी चीज है। अब भी वह एक रहस्य है। घंटोंतक लगातार सिगरेट पीनेवाले आदमी को भी छोटी बीमारियाँ होती हैं, पर दीर्घायु प्राप्त होती हैं। कुछ लोगोंकी सारी उम्र बीमारी में कटती है, तोभी वे ऐसी हालतमें ८० से ८५ सालकी अवस्था होने तक जी सकते हैं। उदाहरणार्थ जंग चढा हुआ दरवाजा भी कई साल खडा रहता है। इसका स्पष्टीकरण यह हैं कि हरएक नियम के लिये अपवाद रहता ही है। जो कोई जो कुछ कहेगा उसे सुननाही चाहिये। जिस को हम नहीं जानते, उसका उपहास न करना अच्छा है। स्वमूत्रोपचार के बारे में इतनी चर्चा करके उसकी उपयुक्तता बताने पर भी उसमें और कुछ रहस्य बाकी रहना स्वाभाविक है। स्वमूत्र सेवन के बाद उसका उपयोग कौनसी खास जगहपर होता है? इसका ठीक उत्तर नहीं दे सकते। फलानी दवा फलानी बीमारी पर है, इस ढंग का उत्तर दिया जा सकता है।

एक बार एक डॉक्टरने कहा कि शिक्षा पूरी करके वैद्यकीय कॉलेज छोडते समय उनको किसी एक बीमारीके लिए साठ उपचार मालूम हुए थे। पर प्रत्यक्ष व्यवसाय शुरू करनेपर दस सालकी अवधि में उनको पता चला कि साठ से भी अधिक बीमारियों का ठीक ठीक सामना करनेवाले गुणकारी उपाय उनके पास नहीं थे। येही डॉक्टर महाशय कहते थे कि कई लोग औषधोपचार न करने पर भी दीर्घ काल जीवित रहे हैं। इसपरसे कह

सकते हैं कि बहुतेरे लोग बीमारीकी वजह से नहीं, पर डॉक्टर के उपचारों के कारण मर गये। इस डॉक्टर की जिन साठ औषधोपचारों के बारेमें जानकारी थी उनका उपयोग न करके वे मूत्रोपचार से रोगियोंको रोगमुक्त कर सकते थे। मूत्रोपचार एक आसान और बिना खर्चका उपचार है। किसी विशेष बीमारी पर यह उपचार नहीं है पर इससे स्वास्थ्य मिलता है। अँग्लैंड और अमरीका जैसे विज्ञान में आगे बढे हुए देशोंमें हजारो लोग मूत्रोपचार जानते है। वे जानने लगे हैं कि इसके मुकाबले का दूसरा उपचार नहीं है। यह अप्रिय उपचार शुरू करनेके पहले मन पक्का करने की जरूरत होती है।

२२

अबतक विवरण किये गये उदाहरणों से यह निष्कर्ष निकलता हैं कि अगर स्वमूत्रोपचार से रोगी रोगमुक्त नहीं होता है, तो वह अन्य किसी उपचार से भी रोगमुक्त नही हो सकेगा। प्रचलित तथा प्राचीन औषधोपचार गुणकारी सिद्ध न होने के उदाहरण भी इस पुस्तक मे आये हैं। स्वमूत्रोपचारस गुण आही जायगा यह निश्चितरूप से नहीं कह सकते। इसके विपरीत कोई सूजन, कॅन्सर, मोतियाबिंद आदि के समान बिमारीयाँ भी स्व-मूत्रोपचारसे ठीक हो गयी हैं। जिन रोगियों की हालत स्वमूत्रोपचार करने लायक नाहीं है उनपर यह उपचार करना अच्छा नहीं है। ऐसी हालत में या तो रोगी मर जाता है या उसपर उपचार करनेपर वह ठीक नहीं हुआ तो उसके नातेदार उपचार करनेवाले को दोष देते है। फिर मृत्यू के बाद बेकायदा जाँच, पंचनामा आदि झंझट क्यों मोल ले ले? डॉक्टरोंकी बात अलग है। वे नातेदारों की अनुमति से उपचार करते है। इसलिये रोगी के मरनेपर भी उनको ऐसे झंझटोंका मुकाबला करना पडता है।

बीमारी कौनसी है, यह देखे बिना स्वमूत्रोपचार करने में कोई हज नहीं है। क्यों कि सब तरह की बीमारीयोंपर वही एक उपचार है। बीमारी दूर हटाने के लिये जादू जैसा प्रवाही पदार्थ बीमार के शरीर में रहता है। उसके लिये अन्न वर्ज्य करनेका परहेज पडता है। निसर्ग की मदद से बीमारी हट जाती है। क्यों की निसर्ग अपना काम करता है। दूसरा कोई उपचार नहीं करना चाहिये। उदाहरण के लिये पेट साफ करने के लिये एनिमा देना, फल खानेको देना आदि उपचार नही करने चाहिये। स्वमूत्रोपचार के समय निसर्ग की मदद से सबकुछ साध्य होता है। केवल विश्वास और निष्ठा चाहिये। निष्ठा के बलपर सब कुछ साध्य होता है। उसके साथ साथ निसर्ग की मदद कई रहस्य खुल जाते है।

जो मनुष्य आस्तित्वमें होनेवाली कोई बात ढूँढता है, तब उसपर एक तरह की जिम्मेदारी रहती है। प्राप्त किये गये ज्ञान की जानकारी पूरे विश्व को देनेकी जिम्मेदारी उसपर है। उसके अनुसार इस पुस्तकमें स्वमूत्रोपचार की जानकारी दी है जो मिस्टर जॉन डब्ल्यू. आर्मस्ट्राँग के लिखे 'दि वॉटर ऑफ लाइफ' इस प्रबंधपर आधारित है। आर्मस्ट्राँग ने कही हुई बातोंका अनुभव प्रस्तुत लेखकने किया है। उनकी पुस्तक पढकर प्रस्तुत लेखक को जिसप्रकार प्रेरणा मिली वैसी दूसरों को भी मिले।

भारत में प्राचीन कालसे स्वमूत्रोपचार का प्रयोग जारी है। इसलिये मिस्टर आर्मस्ट्राँग के प्रबंध को बडा आधार मिला है। भगवान शंकरजी ने देवी पार्वतीजी को स्वमूत्रोपचार का प्रयोग कथन किया था, जो शिवांबुकल्पविधि डामरतंत्र में कहा गया है। उस विधि के संस्कृत श्लोक और उसका अनुवाद इस पुस्तकमें दिया है। आशा है कि उसका उपयोग पाठकों को और उसके संबंधियों को होगा।

२३

स्वमूत्रोपचार के संबंध मे ध्यानमें रखनेलायक बातें

(अ) आठ दिनों के बासे मूत्रसे अंगमर्दन करना चाहिये। (ब) कपडे की चार तहोंवाली पट्टी बासे मूत्र में भिगोकर शरीरपर जहाँ जरूरत हो वहाँ रखनी चाहिये। (क) उपवासः– उपवास का मतलब है स्वमूत्र और आवश्यकतानुसार पानी पीकर रहना। (५) चौबीस घंटों में कमसे कम तीन बार स्वमूत्र पीना चाहिये। सुबह सुबह का मूत्र उत्तम होता है।

स्वमूत्र किसप्रकार पीना चाहिये ?

मनमें हिम्मत बाँधकर स्वमूत्र–प्राशन का प्रारंभ करना चाहिये। गोमूत्र या इपसम सॉल्ट से स्वमूत्र कई गुना स्वादिष्ट होता है। इसके पीतेसमय वह घृणास्पद मालूम नहीं होता।

केवल भाग्यवान लोगोंको स्वमूत्र पीनेकी इच्छा होगी। क्यों कि स्वमूत्र-प्राशन किसी भी प्रकार की बीमारी नष्ट हो जाती है।

साधारणतया दिन में तीन बार स्वमूत्र पीना चाहिये। सुबह जागनेपर कमसे कम दो प्याले स्वमूत्र पीना अच्छा है। दुबारा भोजन के १॥ घंटे बाद अन्नपचन के लिये स्वमूत्र पीना चाहिये।

किसी कारणवश बेचैनी मालूम हो तो फौरन स्वमूत्र पीना चाहिये। सुबह शुरू के दो-तीन और आखिर के दो-तीन चमच छोडकर बीचका मूत्र पीना चाहिये। पाश्चात्य पद्धति में यह क्रिया नहीं है।

अगर बीमार आदमी बेहोश हो जाय, किसीको बिच्छूने काटा हो, या जहरीले साँपने काटा हो तो उस समय रुग्णको उसीका मूत्र देना असंभव है। तब किसी निरोग आदमीका मूत्र उसे जितना मिल सके उतना पिलाना चाहिये। पुरुष के लिये पुरुष और स्त्री के लिये स्त्री का मूत्र चाहिये। इससे धीरे धीरे सारा विष निकल जाता है (नष्ट होता है) और रुग्ण बच जाता हैं।

निसर्गनिर्मित वस्तुओंका स्वमूत्र के साथ उपयोग।

स्वच्छ काली और चिक्कण मिट्टी बासे मूत्र में मिलाकर उसका लेप लगाना चाहिये।

मूत्र और पानी के मिश्रण का एनिमा के लिये उपयोग करना चाहिये। जाडे के दिनों में बासा मूत्र गरम करके शरीरपर रगडना चाहिये। बासा मूत्र गरम करके उससे शरीर को सेंकना चाहिये। मूत्र और पानी समप्रमाण में लेकर उसका बफारा लेना चाहिये।

मूत्र बोतल में भरने के बाद थोडी देर धूप में रखकर फिर बोतल को डाट लगानी चाहिये।

बोतल से बासा मूत्र लेते समय बोतल हिलाकर लेना चाहिये। नस्य करने के लिये ताजा मूत्र लेना चाहिये।

एक, दो, तीन दिन या आवश्यकतानुसार उपवास करना चाहिये। स्वमूत्र और घूंट-घूंट साफ पानी पीकर उपवास करना चाहिए। इसके अतिरिक्त अन्य कुछ भी पदार्थ उपवास की अवधि में नहीं खाना चाहिये। उपवास की अवधि में बासे मूत्रसे दिनमें दो या तीन बार 'डेढ से दो घंटोंतक अंगमर्दन करके मूत्र को शरीरमें सोखा जाना चाहिये।

उपवास के समय शरीरपर छोटी फुन्सियाँ आनेके कारण रगडना असंभव हो, तो कपडे की चार तहों की पट्टियाँ बासे मूत्र में भिगोकर शरीरकी आवश्यक जगहोंपर रखनी चाहिये और उन्हें गीला रखना चाहिये।

बवासीर के रुग्ण के गुदद्वारपर, कोई अंग जल गया हो तो उस भागपर, सूजनपर, अल्सर ड्रॉप्सी आदिपर उपरिनिर्दिष्ट पद्धतिसे कपडे की पट्टियाँ मूत्रमें भिगोकर रखनी चाहिये और उन्हें गीला रखना चाहिये।

स्वमूत्रोतचार की अवधि साफ टट्टी होतीही है। अगर कभी न हो तो मूत्र और पानी के मिश्रणका एनिमा लेना चाहिये।

लंबे उपवास के पहले हृदय की जाँच कर लेनी चाहिये। हृदय की क्रिया अगर नियमबद्ध न हो, तो २ या ३ दिन ही उपचार करना चाहिये।

उपवास सहन करनेकी ताकत रुग्ण में न हो तो उसे एकभुक्त रहना चाहियें। स्वमूत्रोपचार और अंगमर्दन जारी रखना चाहिये। अगर घर का व्यक्ति अंगमर्दन करे तो और अच्छा।

पैर के तलवे, चेहरा, गर्दन, पीठ, कमर, पेट, पैर, हाथ आदि सब अंग पुराने मूत्रसे १०–१२ मिनिट रगडने चाहिये। अगर वह असंभव हो तो उनपर पट्टियाँ रखनी चाहिये।

पुराने मूत्र में थोडी बदबू आती है, पर वह गुणकारी और उपयुक्त होता है।

पुराना याने आठ दिनोंका पुराना बोतल में जमाया हुआ मूत्र। सात दिनोंकी सात बोतलें भरनी चाहिये। हर एक बोतल एक पौंडकी हो। फिर 'आज की बोतल आठवे दिन' इसप्रकार क्रमवार उसमें से मूत्र लेना चाहिये और खाली बोतल फिरसे भरनी चाहिये।

स्वमूत्रोपचार के समय ध्यान में रखनेकी बातें।

प्रस्तुत पुस्तक में ("स्वमूत्रोपचार चिकित्सा") लिखे अनुसार या लेखकसे सलाह लेकर स्वमूत्रोपचार शुरू करना चाहिये।

स्वमूत्रोपचार की अवधि में दूसरी कोई दवा नहीं लेनी चाहिये।

स्वमूत्रोपचार की अवधि में अगर उलटी या पतली टट्टी हो जाय, शरीरपर फुन्सियाँ आ जाय, तो घबराने की बिलकुल जरूरत नहीं है। इन बातों के कारण शरीर शुद्ध होता है।

स्वमूत्रोपचार के समय शराब जैसी नशीली चीजें, तंबाकू आदि वर्ज्य करना चाहिये। अगर हमेशा के लिये छोड दे तो और अच्छा।

बारीक शक्कर, मैदेकी चीजे, गरम गरम अन्न या गरमगरम पदार्थ नहीं खाने चाहिये। हवा बंद डबेका अन्न या पैकेट का अन्न नहीं लेना चाहिये। बिना काँडे चावल का भात खाना अच्छा है। पाश्चर्ड दूध और बनस्पति घी या तेल नहीं खाना चाहिये।

उपवास किसप्रकार करना चाहियें।

गंभीर और पुरानी बीमारी के लिये लंबे अरसेका उपवास हितकारी और आवश्यक है। बीमारी किस प्रकारकी है इस बातपर उपवास की अवधि अवलंबित है। उपवास शुरू करनेपर मूत्र की एक बूंद भी व्यर्थ नहीं जानी चाहिये। हमेशा उसे पीते रहना चाहिये। उसके साथ आवश्यकतानुसार स्वच्छ पानी पीना चाहिये। उपवास की अवधि में या साधारण बीमारी दूर हटाने के लिये अगमर्दन करना चाहिये। उस समय सब स्वमूत्र पीना पडता है। इसलिये अंगमर्दन के लिये दूसरे निरोग आदमी का मूत्र लेना चाहिये।

उपवास के समय हृतकंप और हृदय की ठोंकोका प्रमाण धीरे धीरे कम होता है। स्वमूत्र पीकर उपवास करते समय भूख की पीडा नहीं होती। मूत्र के साथ साथ ही शरीर को पौष्टिकत्व प्राप्त होता है।

उलटी भी उपकारक होती है। क्यों कि उलटी के रूपमें शरीर की गंदगी निकल जाती है। उपवास छोडनेके बाद युक्ताहार और मिताहार लेना चाहिये।

उपवास छोडने के बाद

उपवास छोडने के बाद शुरू में मूँग, मसूर और कुलथी इनमें से एक धान लेकर खूब पानी डालकर उसको पकाना चाहिये। फिर वह पानी (सूप) पी लेना चाहिये। उसके बाद थोडी देरसे चावल पकाकर उसका माँड पीना चाहिये। फिर कुछ घंटोंके बाद अत्यंत हलका और थोडा आहार लेना चाहिये उसके बाद समतोल आहार लेना चाहिये। तीखा, खट्टा या नमकीन आहार वर्ज्य करना चाहिये। कभी ले तो नहीं के बराबर। उसके अनंतर ये चीजें केवल स्वाद के लिये थोडीसी लेनी चाहिये। तली हुई चीजे नहीं खानी चाहिये। तंबाकू, नशीली चीजें या पेय वर्ज्य करने चाहिये।

कपडे की चार तऱ्होंकी पट्टियों के पॅड्स (गद्दी)

फुन्सियाँ, घाव, दाहयुक्त सूजन, कॅन्सर या अन्य बीमारियों के कारण आयी हुई सूजन आदिपर चार तहों के कपडे की पट्टियाँ बासे मूत्रमें भिगोकर

रखनी चाहिये और उनको गीला रखनेकी कोशिश करनी चाहिये। उपवास के दिनों में अंगमर्दन के बदले यह उपचार करना चाहिये। इस समय अगर रुग्ण का मूत्र कम पड जाय तो दूसरे सशक्त व्यक्तिका मूत्र लेना चाहिये। (स्त्रीके लिये स्त्रीका और पुरुष के लिये पुरुष का मूत्र लेना चाहिये)

स्वमूत्रोपचार की प्राचीनता

स्वमूत्रोपचार बहुत पुराने कालसे चालू हैं। आयुर्वेद में आत्रेय ऋषिने शरीरसंपदा कायम रखने के लिये दूध और मूत्र को महत्त्व दिया है।

१) सुश्रुत २) वाग्भट ३) अष्टाङ्गसंग्रह ४) भावप्रकाश ५) योगरत्नाकर ६) हरित इन ग्रंथों में मूत्र का उपयोग बताया है। उसी प्रकार इन ग्रंथो में मूत्रका उपयोग बताया है। उसीप्रकार मूत्र और जानवरों के दूधका (गाय,भैंस, बकरी आदिका) मानवी बीमारी के लिए उपयोग बताया है। मूत्र विषहारक और शक्तीवर्धक है। शिवांबुकल्पविधि में मूत्रकी महिमाका वर्णन किया है। सरकार की तरफ से इस दिव्यौशधि के बारे में शास्त्रीय दृष्टिकोन से अनु-संधान होना चाहिये। फिर सरकार को इसके बारे में अपना मत लोगों के सामने पेश करना चाहिये। एक स्त्री ने तीन ग्रॅम्स अफीम खायी थी। अन्य व्यवित का मूत्र उसे लगातार पिलाया गया और उस की जान बचायी गयी। एक बिल्लीको विषबाधा हुई। उस समय एक सर्वोदयी कार्यकर्ता नेमीनाथ अण्णा फत्तेने बिल्लीको मानव-मूत्र पिलाकर उसकी जान बचायी। यह घटना आगस्त १९६९ की है। सर्पदंश या विषबाधा होनेपर मानवमूत्र के प्राशन से विषहरण हो जाता है। मानवमूत्र विषहारक है। यह उपचार करते समय आहार विहार के बारे में पूर्ण संयम रखना चाहिये। ऐसा न करने से स्वमूत्रोपचार फायदेमंद नहीं होता। स्वमूत्रोपचार का प्रचार देहातों में तथा शहरों में होगा तो गरीबों का जीवन सुखी होगा।

'तेरी दवा तेरे पास है, पर तू भूल गया है' यह उपदेशक अलीने पूज्य महंमद के साले अलीब को दिया है। उसा तरह तेरे पास होनेवाले हौंज में से पानी पी" ऐसा जीझस ख्राइस्टने कहा है। आचार्य भद्रबाहूने "व्यवहार

सूत्र " में लिखा है कि "प्रतिमा" का अभ्यास करनेवाले को स्वमूत्र पीना चाहिये। तिबेट के लामा भी स्वमूत्र पीते है।

परिस्थितिके अनुसार अपवास की अवधि निश्चित करनी चाहिये अगर न सह सके तो नहीं करनी चाहिये। कम से कम एक भुक्त रहना चाहिये।

कितना स्वमूत्र लेना ठीक है, इसका निश्चय खुद करना चाहिये। कान पककर बहता हो तो पिचकारी स स्वमूत्र डालकर उसे धोना चाहिये। फिर रोज कान में स्वमूत्र डालना चाहिये।

स्वमूत्र में थोडा नमक और सूंठ का चूर्ण घोलकर उसको एकजीमा या दादपर रगडना चाहिये या उसपर पट्टीया रखनी चाहिये।

आँख की बीमारी में आँख में स्वमूत्र डालना चाहिये और नस्य (नाक मे मूत्रका पानी लेना) करना चाहिये।

२४

स्वमूत्रोपचार की सत्यता जतानेके प्रमाणवचन

(मिस्टर आर्मस्ट्राँग की पुस्तक के आधारपर)

१) शस्त्रक्रियासे यह निष्कर्ष निकलता है कि शस्त्रक्रिया के पहले किये गये उपचार यशस्वी नहीं है।

२) परंपराप्राप्त गुण स्वास्थ्य है, अस्वास्थ्य नहीं।

३) अनाडी देहाती जो इलाज कहते हैं उनपर भी डॉक्टरों को विचार करना आवश्यक है।

४) रुग्णकी बीमारी अपने फायदे के लिये है यह जानकर डॉक्टर उसकी बढाते है।

५) कीडोंकी उत्पत्ति को रोकने वाले द्रव्योंके (अँटिसेप्टिक) बारेमें सोचनेपर मालूम होता है कि मानवमूत्र का स्थान सबसे श्रेष्ठ है ।

६) स्वमूत्रोपचार में उपवास मूत्र और पानी पीकर ३ या अधिक दिन किया हुआ बडे महत्त्वका भाग है ।

७) रुग्ण की बीमारी ठीक करनेके लिये गोमूत्र की आपेक्षा स्वमूत्र बहुत प्रभावशाली है ।

८) हरी घास खाकर रहनेवाली गायके मूत्र का उपयोग शरीर को लगानेके साबण तैयार करने में करते हैं ।

९) क्या शरीर से बाहर फेंका गया द्रव्य फिरसे पेटमें लेना ठीक है ? हाँ ! बिलकुल ठीक है । इसके लिये पेडोंका उदाहरण लें सकते हें । इसके अलावा देखा गया है कि मूत्रमें उपयुक्त क्षार होते हैं, इसलिये मूत्रभी उपयोगी सिद्ध हुआ है ।

१०) नैसर्गिक रूपमें कोई द्रव्य दूर करनेपर उसे विष माना जाता है, पर वही द्रव्य मूत्रता जब नैसर्गिक रूपमें होता है, तब विष नहीं माना जाता ।।

११) मिजाजदार लोगोंका कहना है कि स्वमूत्र पीने का प्रकार घिनौन' है । निरोग आदमी के मूत्र का स्वाद इप्सम सॉल्ट या एरंडतेलके जितना भी तिर स्करणीय नहीं हें । हम जिसप्रकारका अन्न खाते हें या पेय पी लेते हे उसपर भी मूत्र का स्वाद निर्भर है । वह घंटेसे भी बदल सकता है ।

१२) मूत्र पेटमें जाते समय वह शुद्ध होकर (फिल्टर होकर) जाता है । उससे पेटकी कई पीडाएँ दूर होती है । शरीर में कोई बाधाएँ आ जाय तो वे दूर हटती हैं । जीवनावश्यक शरीर-घटक धातु, इंद्रियाँ, शरीर के अंदर के अलग अलग मार्ग साफ होते हें । थोडेमें कह सकते है कि शरीरपर अच्छा परिणाम होता ह ।

१३) स्वमूत्र पीना, स्वमूत्र और पानी पीकर उपवास करना, आठ दिनोंके बासे मूत्र में पट्टियाँ भिगोकर शरीरको लिपटाना या बासे मूत्रसे अंगमर्दन करना आदि उपचारोंसे रोगपीडित आदमीकी जान बचायी जा सकती है।

१४) मूत्र निर्जीव द्रव्य नहीं है। उसमे सजीव द्रव्य होते हैं और उसमें रक्त, मांस आदि जीवनाश्यक शरीर घटक धातू होते है।

१५) सूक्ष्म रीतीसे विचार करनेपर छूरी और रेडिअमकी मदद से कॅन्सर हट जाता है यह बात नहीं पटती। शस्त्रक्रिया से परिणाम के बारेमे निर्णय कर सकते है, पर शरीरमे से रोगका उच्चाटन नहीं हो सकता।

१६) रोग की उत्पत्ति और बढती अनिष्ट आहार के कारण होती है।

१७) शरीरमे जरूरत से अधिक रहनेवाला रक्तसंचय गाँठ, ग्रंथी आदि स्वमूत्रप्राशनसे दूर हटती है।

१८) स्वमूत्रोपचार में रुग्णका आठ दिनोंका बासा मूत्र बोतलोंमें जमाते ह और उससे दिनमें कमसे कम दो-तीन बार डेड घंटेतक अंगमर्दन करते हैं और शरीर में मूत्र सोखाते हैं। यह बात स्वमूत्रोपचामें वैशिष्टपुर्ण है।

१९) त्वचा के लिये स्वमूत्र उत्तम अन्न है। उससे सब प्रकारके त्वचा रोग दूर होते है।

२०) किसी डॉक्टरने किसी रुग्णको स्वमूत्र और पानी पीकर उपवास करनेको कहा, तो उसको सब पागल कहेंगे। पर असलमें स्वमूत्र और पानी पीकर उपवास केरनेसे आदमीकी जान बच जाती हैं।

२१) रुग्णकी ताकत कायम रखनेके लियें उसे अन्न लेनेका आग्रह किया जाता है। पर ऐंसा करनेसे बहुत बार रुग्णकी मृत्यु हो जाती ह। इसको टालनेके लिए रुग्णको उसका मूत्र और पानी पिलाकर उसका स्वास्थ्य कायम रखना ठीक रहता है। स्वमूत्रोपचारसे जीवनावश्यक घटकोंका प्रमाण ठीक हो जाता हैं।

२२) मूत्रपिंड की बीमारी (ब्राईट डिसीज), मूत्राशय (ब्लॅडर) मूत्रपिंड (किडणी) और उसके संबंधकी दूसरी बिमारीयाँ ३ से लेकर १४ दिनों तक स्वमूत्र और पानी पीकर उपवास करने से नष्ट हो जाती है।

२३) यह निश्चत बात है कि आँखों की बीमारी का उद्गम शरीर में ही होता है। शरीर में पहुँचे हुए किसी विजाती द्रव्यके कारण होनेवाली बाधाओंका वह परिणाम है।

२४) जीवनावश्यक शरीरघटक धातू अगर निरूपयोगी हो जाय तो उसको दुरूस्त करनेका काम स्वमूत्र सेवनसे हो जाता है।

२५) स्वमूत्र और पानी पीकर एक हफ्ता उपवास करनेसे और आठ दिनोंके बासे मूत्रसे शरीरमर्दन करनेसे शरीर शुद्ध होकर सेहत बहुत अच्छी बनती है। ताजी सब्जी, कच्चेफल, सेब, मोसंबी, संत्रे, केले, फलोंका और सब्जिओंका कच्चा सॅलड, टमाटर, भापपर पकाये शाक. छिली हुई कच्ची मछली, पाश्चर्ड दूध शहद आदि चीजे थोडी-थोडी खानी चाहिये। युक्ताहार और मिताहार होना चाहिये। हवाबंद डबेका और दुबारा पकाया अन्न नहीं खाना चाहिये। इन नियमोंके अनुसार न चलनेसे स्वास्थ्य बिगड जाता है।

२६) शुरूमें बदबूवाला स्वमूत्र अशुद्ध होता है तोभी एकबार स्वमूत्रपान शुरू करनेपर वह धीरेधीरे शुद्ध हो जाता है।

२७) शरीरके विशेषतः चेहरा, गर्दन और पैर ये अंग पुराने स्वमूत्रसे रगडने चाहिये।

२८) स्वमूत्रोपचार करनेवालेको यह डर रहता है कि शिष्टाचार के विपरीत स्वमूत्र पीनेको हिम्मत करनेपर समाज बहिष्कृत करेगा।

२९) रोगप्रतिबंधक लसे (सीरम्स) या बडी माता की लस (व्हॅक्सिन) जैसी लसोंके कारण भयकर रोगोंकी (कर्करोग, हृद्रोग आदि) उत्पत्ती होती है। तो भी यह महत्व की बात स्पष्टतया लोगोंके सामने नही आयी है। सीरम्स और व्हॅक्सिन के बारेमें कई डॉक्टरोंका अनुकून मत नही है। उनका कहना है कि व्हेक्सिन्स और सीरम्स की सूई लेनेसे हृद्रोग जैसे भयंकर रोग उत्पन्न होंगे।

३०) जिस ज्वरका निदान नहीं होता है, ऐसा ज्वर आनेपर स्वमूत्र और पानी पीकर दीर्घ अवधिका या कमसेकम १५ दिनोंका (या १८ दिन उपवास करनेसे बुखार कम होता है। त्वचा अच्छी हो जाती है। उत्साह बढता है और वह आदमी अपने काम अच्छी तरह पूर्ण करता है। खासकर उसका जीवन स्वस्थ और वैभवशाली हो जाता है।

३१) स्वमूत्रोपचार पद्धतिसे कोई भी बीमारी हो हमेशाके लिये ठीक हो जाती है। स्वमूत्र और पानी पीकर दस दिन अगर उससे कम अवधिका उपवास करनेपर बीमारी नष्ट होती है। प्रचलित याने अॅलोपेथी आदि पद्धति की दवायें लेनेसे बीमारी हमेशाके लिये तो ठीक होतीही नहीं, उलटे सुप्तावस्थामें अपना स्थान पक्का कर लेती है।

३२) बुखार की अवस्थांमें मूत्र बिलकुल कम और गाढा होता है। इसका कारण है कि ऐसी अवस्थामें शरीरके लिये आवश्यक मौलिक क्षार और घटक धातू कम होते जाते है।

३३) एक रुग्णको एक हप्ता टट्टीही नहीं हुई थी। और ७२ घंटोंमें पेशाब भी नहीं हुआ था। ऐसी कठिन हालत में उस रुग्णको मूत्रोपचार करनेवालेने एक पिंट अपना मूत्र पिलाया। २ घंटोंके बाद रुग्णको थोडा थोडा पेशाब होने लगा। मत पक्का करके वह रुग्ण अपना मूत्र पीने लगा। उसके ४ घंटों बाद रुग्ण को एक पिंट पेशाब हुआ। वह मूत्र दिखनेमें खराब और बदबूदार था, तोभी उसने पी लिया। करीब उसी समय टट्टीभी हुई। हर दिन वह चौबीस घंटोंमें जितना पेशाब करता था, उतना सारा पी लेता था। धीरे धीरे वह बिलकुल चंगा हुआ और घर गया। मेडिकल जर्नलस को यह घटना लिखकर भेजनेपर थी उन्होने इसे प्रसिद्ध नहीं किया।

३४) गरमी की बीमारी शरीर में विष समाजाने से हो जाती है। उस विषको शरीर के बाहर निकाल देना यही उसका सच्चा इलाज है। यह बीमारी स्वमूत्र और पानी पीकर नष्ट हो जाती है। क्यों कि मूत्र में पीप के निर्माण को प्रतिबंध करनेवाले गुणधर्म स्वमूत्र में होते हैं।

३५) लोग शस्त्रक्रिया को कोसते हें, क्यों कि आजकल जरूरत न होनेपरभी शस्त्रक्रिया की जाती है। जिन रोगों के लिये वह की जाती है वे रोग निसर्गनिर्मित साधनोंसे ठीक हो जाते है।

३६) मूत्रका पृथःकरण करनेपर निकलनेवाले निष्कर्ष चकित कर देतें हैं। घाव भर आने के लिये स्वमूत्र जैसा दूसरा प्रभावशाली साधन नहीं है। मूत्र में होनेवाले अलोटनेट नामक द्रव्य के कारण जलनेकी वजहसे होनेवाले घाव या अन्य प्रकारके घाव भर जाते हैं।

३७) स्वमूत्रोपचार की जानकारी रखनेवाले लोग सत्य परिस्थिति से फायदा उठाकर रुग्णो को चंगा कर देते है। इसलिये स्वमूत्रोपचार की जानकारी रुग्णोंको करा देना अच्छा है।

३८) चौबीस से बाहत्तर घंटे मूत्र और पानी पीकर श्लेष्मा (म्यूकस कोलायटीस) नामक बीमारी नष्ट की जा सकती है।

३९) ताजा स्वमूत्र पीना, आठ दिनोंका पुराना स्वमूत्र शरीर को रगडना (दिन में दो-तीन बार डेढ से दो घंटे) और स्वमूत्र पीकर कम से कम ३ या जरुरत के अनुसार अधिक दिन उपवास करने से गंभीर बीमारियाँ भी चली जाती है।

४०) रुग्णकी ताकद कायम रखने की इच्छा से उसको अन्नग्रहण का आग्रह करना बडी भारी भूल है।

४१) अगर रुग्ण को अन्नकी रुचि या इच्छा न हो, तो उसके लिये जबरदस्ती दिया हुआ अन्न विषवत है।

४२) जिनपर शस्त्रक्रिया हुई है, ऐसे रुग्ण बेकार हो जाते हैं।

४३) रुग्णको स्वमूत्र पिलाकर, एकबार अन्न देकर, अंगमर्दन करके, अगर शरीरपर कोई फुन्सियाँ आ जाय तो उनपर स्वमूत्रमें भिगोयी पट्टियाँ रखनेसे रुग्णकी बीमारी जल्दी नष्ट हो जाती है।

४४) प्रचुर मात्रामें स्वमूत्र पीकर इंद्रिय विकृतिजन्य रोग हट जाते हैं।

४५) द्विपाद या चतुष्पाद प्राणियोंकी तरफ गोर से देखनेपर दिखाई देता है कि वे एकदुसरे का मूत्र चाटते है। संसर्गजन्य रोगोंसे मुक्त होनेके लिये निसर्गने प्राणियोंको कितनी प्रभावी बुद्धि प्रदान की है।

४६) निसर्गने कुत्तोंके अयती रक्षा करनेके लिगे बुद्धि प्रदान की है और मानव अपना सर्वनाश करनेके लिये भेजा दिया हैं। इस बात के स्पष्टीकरणके लिये बंदर बकरियोंका उदाहरण अत्यंत सूचक है।

४७) मानवने पृथ्वीपर जब पदार्पण किया तब उसका नाश न होने पाये इसलिये निसर्गने कुछ न कुछ इन्तजाम किया होगा। बीमारीसे रक्षा करनेकी जो व्यवस्था निसर्गने की है। वह उपेक्षणीय नहीं है। शरीर स्वास्थ्य

रखनेके लिये हर एक मनुष्य के पासही उपाय है जो बिलकुल सादा उत्कृ
और सुलभ है।

४८) जुकाम को रोकना न्यूमोनिया जैसी बीमारियोंको बुलाना है।

४९) भोजनमे पिष्टमय पदार्थोंको अधिकता और धातुधर्मक क्षारोंक
अभाव होनेसे जुकाम होता है।

५०) प्रमाणबद्ध आहार न होनेसे जुकाम आता है।

५१) मुर्गियाँ पेशाब नहीं करती। इसलिये उनको तीन दिन पानी ह
पिलाकर रखनेसे वे खूब अंडे देती है।

५२) शरीरके लिये जो हितकर हो ऐसी रोटी, कच्चे फलोंका सॅल
ताजे पके फल काजू, नारियल, बादाम, शहद, आदि पदार्थ एकभुक
रहकर खाना। इसको कॅटरपिलर आहार कहते है।

५३) उपवास की (स्वमूत्र और पानी पीकर अवधि मे सिरपर औ
चेहरेपर बासा मूत्र रगडकर सोखाना चाहिये।

५४) अपने रोज के काम संभालकर उपवास कर सकते है।

५५) युक्त और मित आहार न लेनेसे बीमारीयाँ हो जाती है।

५६) हवाबंद डबे के फल, मांस आदि दुबारा पकाया हुआ अन्न, प्रक्रिय
किये हुए खाद्य पदार्थ, उदाहरणार्थ मैदेकी डबलरोटी, बारीक शक्क
काँडे हुए चावल, पाश्चर्ड दूध, मसाला, अधूरा उबाला हुआ दूध (यह दू
चूहेको पिलाने से वे बचे नहीं देते और बछडोंको पिलानेसे वे मर जाते है
आदि पदार्थ खाने के लिये उपयुक्त नहीं हैं। इसलिये वर्ज्य करने चाहिये

५७) स्वास्थ्य के लिये पौष्टिक पदार्थ ये हैं: मुर्गी का ताजा मांस, अं
मछली, तैयार फलोंका और सब्जियोंका सॅलड, भापपर पकायी सब्जिय
रवेकी रोटी, मौसम के पके फल, बिना काँडे लाल चावल, मख्खन औ
शहद (मधुमेह की बीमारी में मीठे पदार्थ वर्ज्य)।

५८) अधिक पिष्टमय पदार्थ सेहत के लिये हानिकारक होते है।

५९) नियमित आहार, (कम भी नही, ज्यादा भी नही) बीच-बीच
एक से तीन दिनों का उपवास (स्वमूत्र और पानी पीकर) करना चाहिये
या एकभुक्त रहना चाहिये।

६०) सुबह सुबह केवल गिलास स्वमूत्र सेवन करना चाहिये। आर्मस्ट्रांग २४ घंटोंमें जितना हो सके उतना स्वमूत्र पीते थे। एकभुक्त रहनेसे या दिन में केवल दुबारा भोजन करनेसे और बीच में कुछ भी न खानेसे स्वास्थ्य अच्छा रहता है।

६१) एक अंधेने अधिक से अधिक १०१ दिनों का उपवास (स्वमूत्र और पानी पीकर) किया और उसको दृष्टी प्राप्त हुई। इस प्रकार के और अन्य निरोग आदमी का आठ दिनों का बासा मूत्र रगडना अच्छा है। स्वमूत्रोपचार में थोडे दिनों का उपवास भी महत्त्वपूर्ण होता है।

६२) रेडियम ट्रीटमेंट और शस्त्रक्रिया से बहुत पीडा होती है, इसलिये कुछ डॉक्टर्स निराश और उदास होकर रुग्णों की भलाई के लिये दूसरे उपचारोंका विचार करने लगे हैं। कुछ डॉक्टर्स ऐसे उपचार पसंद करते हैं। वे उनमें सुधार नहीं चाहते हैं। परिस्थिति के बदल जाने से वे नये उपचारों के बारे में सोचेंगे।

६३) डॉक्टरों का व्यवसाय राष्ट्र के स्वास्थ्य के लिये है या राष्ट्र के नागरिक डॉक्टरोंके फायदे के लिये है? यह एक प्रश्न है। असल में डॉक्टर का व्यवसाय राष्ट्रहित के लिये है। नागरिकों को भी डॉक्टरोंका उचित आदर करना चाहिये।

६४) निसर्गोपचार की अन्य गुणकारी पद्धतियोंकी तरह स्वमूत्रोपचारभी एक गुणकारी पद्धती है। इसलिये निसर्गोपचार के खिलाफ जाना बुरे परिणामों का मुकाबला करना है।

६५) रुग्ण को स्वमूत्रोपचार शुरू करनेपर हो सके तो डॉक्टर की तरफ से देखभाल होना अच्छा है।

६६) भविष्य में ऐसा एक दिन जल्दीही आ जायेगा जब आर्मस्ट्रांग और रावजीभाई पटेल के रुग्णालयोंकी तरह बहुतसे रुग्णालय स्वमूत्रोपचार के लिये डॉक्टर्स होंगे और रुग्णसेवाके लिये सैकडो परिचारिकाएं होंगी।

६७) अपने खुदके हित की अपेक्षा जनता के स्वास्थ्य का विचार पहले करना चाहिये।

६८) स्वमूत्रोपचारा के लिये एक पैसा भी खर्च करना नहीं पडता है। गरीबसे अमीर उससे फायदा उठा सकते है।

६९) फटे हुए हाथ पैर, फुन्सियाँ, बिच्च्छूका दंश, चोट आया हुआ भाग, पैरोंको पसीना आना, सिरके बाल झडना, शरीरपर आयी हुई चकतियाँ, त्वचाकी अन्य बीमारियाँ आदिपर आठ दिनोंका बासा मूत्र रगडनेसे ये बीमारियाँ हट जाती है।

७०) जिनकी आर्थिक परिस्थिती रुग्णालय में जाकर खर्च करनेलायक न हो, उनको स्वमूत्रोपचार करनेके लिये अगर डॉक्टर मिले तो उसका बहुत फायदा होगा ।

७१) ताजे स्वमूत्रसे कुल्ला करनेसे गला साफ हो जाता है।

७२) पथरी रोग के कारण मूत्रमार्ग में बाधा उत्पन्न हो तो स्वमूत्र प्राशनसे वह दूर हो जाती है। पेशाब ठीक तरहसे होने लगता है। ऐसे अमोल उपचार के लिये एक पैसा भी खर्च करना नहीं पंडता है।

७३) थोडी देरसे क्यों न हो पर संधिवात और मधुमेह दुसरी बीमारियाँ की तरह स्वमूत्रोपचारसें ठीक हो जाते है।

७४) यह बीमारीको ठीक करनेवाला जादू जैसा प्रवाहि द्रव्य रुग्णके पासही होता है। उसके लिये एकही शर्त है। अन्न वर्ज्य करके स्वमूत्र और पानी पीकर कम-अधिक का उपवास करना चाहिये ।

७५) मौका पानेपर निसर्ग अपना काम अच्छीतरह करता है। केवल उसपर विश्वास होना चाहिये।

७६) तरह तरह की जहरीली दबाइयोंकी सूइयाँ चुभानेसे मानव के रक्त की क्या हालत होती होगी इसके बारेमें हम विचार भी नहीं कर सकते ।

७७) सीरम थेरॅपी की नीव पक्की नही है।

७८) स्वमूत्रोपचार का प्रयोग बहुत साल करके उसमें कुछ कमी हो तो उसे अनुसंधानद्वारा सिद्ध किये बिना स्वमूत्रोपचार को निरुपयोगी बताना ठीक नहीं है।

२५

स्वमूत्रोपचार-चिकित्सा के संबंधमें पाश्चात्य और भारतीय पद्धतियोंमें रहनेवाला फर्क ।

शिवांबुकल्प विधिमें जिन दवाइयोंका उल्लेख है, उनको लेनेका प्रमाण कुछ श्लोकोंमें स्पष्ट किया है और कुछ में नहीं है । इसलिये किसी वैद्य से पूछकर या खूद सोचसमझकर शुरूमें दवाका अल्प प्रमाणमें उपयोग करके जैसे जैसे तबीयतको उसका फायदा मालूम होगा वैसे उसको बढाना चाहिए ।

शिवांबुकल्पविधी में बतायी हुई दवाइयाँ किसी रसशाला में या काष्ठौषधिकी दूकानसे खरीदनी चाहिये।

औषधोपचारकी अपेक्षा परहेज रखने से जल्दी रोगमुक्त हो सकते है । स्त्री-सेवन अधर्म-सेवन (श्लोक १०४, १०५, १०६) नमकीन, तीखा और खट्टा केवल स्वाद के लिये खाना चाहिये । तले हुआ, ज्यादा तलनेवाला पदार्थ वर्ज्य करने चाहिये । चना, हरहर, उडद आदि न खाकर मूँगका उपयोग करनेसे स्वास्थ्य अच्छा रहकर दीर्घायुष्य प्राप्त होता है । उडद की दाल, चनेकी दाल, हरहर की दाल, पमशाक, कुम्हडा, बैगन, आलू, सफेद सेम, मटर और उनके समान बातकारी पदार्थ और फल वर्ज्य करने चाहिये । चावल कम खाने चाहिये । प्रक्रिया किये हुए पदार्थ जैसे डबलरोटी, बारीक शक्कर (आटे जैसी) इडली, दोसा आदि नहीं खाने चाहिए । अल्पावधि का उपवास केवल स्वमूत्र और पानी पीकर (कमसे कम तीन दिन) करनेसे तन्दुरूस्ती जलदी सुधर जाती है । कम से कम एकभुक्त रहकर हफ्तेमें एक दिन (२४ घंटे) स्वमूत्र और पानी पीकर उपवास करना चाहिये । पाश्चात्य पद्धति में उपवास पर अधिक जोर दिया है । उतना जोर भारतिय पद्धतिमें नहीं है । तो भी उपवास का महत्त्व स्वानुभव से मालूम होता है ।

(विषयका महत्त्व बतानेके लिये कई जगह द्विरुक्ती हुई है ।)

पाश्चात्य पद्धतिमें नस्योपचार नहीं बताया गया है। तो भी अनुभवसे नस्योपचार उपयुक्त सिद्ध हुआ है ।

नस्य किस प्रकार करना चाहिये ?

करीब दो औंस पानी समा लेनेवाली कटोरी स्वमूत्र से पूरी भरना और दाहिने हाथकी उँगलिसे दाहिना नमुना दबाकर बंद करना। फिर बाये नथुने में ऊपरकी तरफ स्वमूत्र जोरसे खींचना। जब वह गले में आ जाय तब थूंक देना। यह क्रिया ५-६ बार करना। दाहिने नथुने से वैसे ही करना। इसप्रकार नस्य करनेसे आँखोंकी बीमारियाँ नष्ट होनेमें मदद मिलती है और कफ, वात, पित्त नष्ट होते है। भूख लगती है। शरीर बलवान होता है। (श्लोक ८५)

उपवास

शिवांबुकल्पविधि मे उपवास का महत्त्व नहीं बताया गया। पाश्चात्य पद्धति के उपासक मि. आर्मस्ट्राँग उपवास (केवल स्वमूत्र और पानी पीना) करनेपर जोर देते है। उन्होने अपनी निगरानी में रुग्णोंसे अधिक से अधिक ६० दिनोंका उपवास सफल कराया। उपवास की मदद से असाध्य रोग दूर हटनेके उदाहरण उन्होंने अपनी पुस्तकमें दिये है। कमसे कम तीन दिनोंका उपवास कुछ बीमारियोंमें आवश्यक है। किसी भी तरहसें विचार करनेपर मालूम होता है कि बीमारी में उपवास करनेसे बीमारी जल्दी ठीक हो जाती है। शिवांबुकल्पविधिमें उपवास को इतना महत्त्व नहीं दिया गया है, तोभी जहाँ तक हो सके, रुग्णको उपवास करना आवश्यक है। अगर वह नहीं हो सकेगा तो कमसे कम एकभुक्त रहना चाहिये या हफ्तेमें संपूर्ण एक दिन उपवास करना चाहिये। पाश्चात्य पद्धतिमें मांसका टुकडा मुँहमें रखकर उसको चूसकर उपवास छोडते है। हमारे यहाँ मोसंबीका रस, शहद का पाणी या मूँग पकाकर उसका पानी (सूप) पीना उपयुक्त मानते है। मधुमेह के रुग्णोंको शहद आदि मीठे पदार्थ वर्ज्य है।

शुरू की धारा छोड देना।

सुबह स्वमूत्र लेतेसमय शुरू की और आखरी ४ – ५ धाराएँ छोडकर बीच का मूत्र पीना चाहिये। इसके बारे में लेखक को स्वानुभव से मालूम हुआ हैं कि शुरू की ४ – ५ धाराएँ पित्तकर होती हैं। उनको लेनेसे कुछ घंटो के बाद गले में जलनसी होती है। उनको न लेनेसे ऐसा नहीं होता। पाश्चात्य पद्धती में ये धाराएँ छोडने का उल्लेख नहीं हैं। जो पद्धति जँचती हैं, उसका अनुसरण करना चाहिये। शुरूकी और आखिर की धाराएँ छोडकर स्वमूत्र लेने से उसका प्रमाण कम होता है और टट्टी साफ होने में मदद नहीं मिलती।

स्वमूत्र उबालकर औटाना।

भारतीय पद्धती के अनुसार मिट्टीके बर्तन में मूत्र औटाकर ¼ किये बगैर (श्लोक ४५) उससे अंगमर्दन किया तो अंग शिथिल पडता हैं और तन्दुरुस्तीपर उसका बुरा असर होता है। (श्लोक ५०) यह बात उसमें स्पष्ट की है। पाश्चात्य पद्धतिमें इसका उल्लेख नहीं है। आर्मष्ट्राँगने कहा है कि आठ दिनोंका बासा मूत्र अंगमर्दन के लिये उपयुक्त होता है। उन्होंने यह नहीं बताया कि मूत्र उबालकर न लेनेसे अंगमर्दन के बाद अंग को शिथिलता आती है। उबाल के रखा हुआ मूत्र फिर से गरम करने की (अंगमर्दन के समय) जरूरत नहीं हैं। (श्लोक ५१)

ग्रहण के समय मंत्रोच्चार

भारतीय शास्त्र में ग्रहण के समय मंत्रोच्चार करके शिवांबुपान करने के लिये बताया हैं। (श्लोक ४६, ४७) इसमें गहरा अर्थ हैं। तोभी ये क्रियाएँ साधारण लोगों के लिये कठिन है। पर उसका उपहास करना ठीक नहीं है। क्यों कि इन क्रियाओं के लिये शास्त्राधार है। केवल योगी लोग इसका अनुभव कर सकते है।

शिवांबुकल्पविधि में बताये अनुसार कुछ आयुर्वेदीय औषधियोंका चूर्ण शिवांबु में मिलाकर लेते हैं या चूर्ण खाकर उसके बाद शिवांबु पिया जाता है। उससे मानव की उन्नती किस प्रकार होती हैं इसका वर्णन प्रत्येक श्लोक में दिया है। योगी बलवान और कांतिवान होता है। उसका दु:ख नष्ट होता है। उसको दीर्घायु और सिद्धी प्राप्त होती है। उसका शरीर हलका होता है। वह मृत्यू को जीत सकता है। दीर्घ दृष्टी प्राप्त होती है। स्वर उत्तम होकर तारूण्यप्राप्ति होती है। वह भ्रमरहित होता है।

सिरके बाल काले होते हैं। वृद्धावस्था नहीं आति। वह रूपवन बनता है। ऐसी अनेक बाते उसमें बतायी हैं जो हास्यास्पद और अतिशयोक्तिपूर्ण लगेंगी पर उसके बारेमें अनुसधान की जरूरत है। अनुसंधान के बिना भी ये औषधियाँ रुग्णोंको गुणकारी सिद्ध हुई हैं। अनुसंधान करनेपर दुसरे इलाजोंपर होनेवाला खर्च बच जाएगा और राष्ट्रकी भलाई होगी।

स्वमूत्रोपचार की महती शब्दोंमें कहना कठिन है। स्वमूत्र पुष्टिदायक और विषहरण (Antipoison) करनेवाला है। बीमारी होनेपर जानवर निसर्गत: स्वमूत्र चाटते है। इसलिये स्वमूत्रोपचार के दवाखाने खोलनेकी अपेक्षा घरघरमें परिवार की प्रमुख स्त्रीको स्वमूत्रोपचारका योजनाबद्ध कार्यक्रम शुरू करना चाहिये जिससे दुसरी पॅथीके औषधोपचार और शस्त्रक्रिया के लिये खर्च किए जानेवाले करोडो रुपयोंकी बचत होगी और स्वमूत्रोपचार का प्रचार होगा। स्वमूत्रोपचार का प्रचार हर घरमें, हर देहात से, हर शहरमें और पूरे देशमें होना चाहिये यह एक अच्छे दर्जेकी समाज सेवा है। मानव तथा जानवरोंको रोगरहित करनेका उत्तम मौका इसमें मिलता हैं। सब प्रकारके रोगोंसे किसी रुग्णका शरीर खोखला बन गया हो तो स्वमूत्रोपचारसे उसे कोई फायदा नहीं होता। पर ऐसी हालत में स्वमूत्रोपचार को दोष नहीं देना चाहिये।

स्वमूत्रोपचारसे रुग्णके ठीक होनेपरउसने मनमाना खाना और रहना शुरू किया तो फिरसे बीमार उत्पन्न हो जाती है। किसी भी प्रकारकी

रखने के लिये निसर्ग नियमोंके अनुसार चले तो दीर्घायू और सुखीजीवन प्राप्त हो सकता है। स्वास्थ्य पानेके लिये स्वमूत्रोपचार के जैसा सादा, निसर्गनिर्मित और स्वतंत्र उपाय दुसरा नहीं है। स्वमूत्र जंतुनाशक, विष-हारक, बलसंवर्धक रोगहरक, स्वास्थ्य देनेंवाला, पौष्टिक, पचनेमें सहायक, आश्चर्यकारक रीतीसे पेट साफ करनेवाला, इंद्रियोंकी रक्षा और संवर्धन करनेवाला, और बहुगुणी होता है। वह उपाय छोटोंसे बडोंलतकके लिये उपयोगी है। वह बिना खर्चका, निरूपद्रवी, दोषरहित, सादा और धार्मिक शुद्धता से सुसंबद्ध है। इसके लिये नाडीपरीक्षा या रोगचिकित्सा के ज्ञान की आवश्यकता नहीं है। स्वमूत्र पीना, बासा (आठ दिनोंका) स्वमूत्र शरीरपर रगडना, स्वमूत्र और पानी पीकर कमसे कम तीन दिन उपवास करना आदि से रुग्ण अच्छा होता है। स्वमूत्र कफ पित्त और वातनाशक है। निष्ठा और श्रद्धा से स्वमूत्रोपचार की ये तीन बाते करनेपर किसीभी तरह की बीमारी नष्ट हो जाती हैं। उपवास छोडने के बाद तुरन्त अन्न न लेकर मूंग की दाल पकाकर उसका पानी (सूप) शहद-पानी, मोसंबीका रस साबुदाने की खीर, लेनी चाहिये उसके बाद मित और युक्त आहार शुरू करना चाहिये।

ताजा या बासा स्वमूत्र इस्तेमाल करने के नियम।

बीमार आदमी को सुबह, दुपहरको और रात के भोजन के एक घंटा बाद याने तीन बार सबका सब स्वमूत्र एक बूंदभी व्यर्थ न गँवाकर पी लेना चाहिये। (इसमे शिवांबुकल्पविधी का नियम न माने तो कोई हर्ज नहीं है) इसमें बीमारी हटने में ३३ प्रतिशत मदद मिलती हैं। इन तीन बार के अलावा मिलनेवाला स्वमूत्र एक-एक पौंड की बोतलों में १,२ ऐसे क्रमवार ७ नंबर चिपकाकर ७ दिनों में जमाकर रखना चाहिये। फिर आठवे दिन १ नंबरवाली बोतल से बासा स्वमूत्र लेकर उससे धीरे धीरे अंगमर्दन करना चाहिये जिससे वह मूत्र शरीर में सोखा जाय। इस से बीमारी दूर हटानेके लिये ३३ प्रतिशत मदद मिलती हैं। इसप्रकार रगडने में पहली बोतल एक दिन में खतम करके उसी दिन फिरसे स्वमूत्र से भरके रखनी चाहिये

अगले दिन दूसरी बोतल ऐसा क्रम रखना चाहिये। गर्दन, गला और छातीपर बडी सावधानीसे स्वमूत्र रगडना चाहिये। उपवास की अवधि में बासे स्वमूत्र का उपयोग आवश्यक है। शरीर रगडने की क्रिया पैरोंसे शुरू करके सिरतक कमसे कम डेढ घंटा करनी चाहिये। इसमें पूरी बोतल खतम करके वह फिरसे स्वमूत्र भरकर रखनी चाहिये। शरीरपर कहीं जख्म हो, तो उस हिस्सेपर बासे मूत्र में भिगोयी पट्टियाँ रखनी चाहिये। उसी प्रकार शरीर के दर्दभरे अंगोपर जैसे छाती, पेट, पीठ, घुटने बाहू आदि – काली मिट्टीको बासे मूत्र में मिलाकर उसका गीला पौन इंचका लेप लगाना चाहिये उसके बाद लेप के सूखनेपर उसको मिलाकर वह जगह गिले कपडे से साफ करनी चाहिये। बीमारी दूर हटाने में रगडने का या लेप लगानें का ३३ प्रतिशत हिस्सा है। मधुमेह की बीमारी में होनेवाले घाव को बासे या ताजे मूत्र से धोनें में कोई हर्ज नहीं है।

बीमारी में अन्न देने के बारेमें

बीमारी में रूग्णकी ताकद कायम रखनेके लिये लोग उसे अन्न देते हैं। पर वह बडी भारी भूल है। इस बातपर मि. आर्मस्ट्राँग का दृढ विश्वास था। उन्होंने रूग्णोंको केवल मूत्र और पानी देकर उनसे अधिक से अधिक १०१ दिनोंका उपवास कराया। असाध्य बीमारी के कारण रुग्ण मरनेवालाही था। उस समय आर्मस्ट्राँग ने तीन आदेशोंके अनुसार ताजा स्वमूत्र पिलाकर बासे स्वमूत्रसे अंगमर्दन करके, (उपवास की अवधि में दूसरे आदमी के बासे मूत्रसे अंगमर्दन करके स्त्रीका स्त्री के लिये और पुरुष का पुरुष के लिये) स्वमूत्र और पानी पिलाकर ३ या अधिक दिनोंका उपवास कराके रुग्णों को अपनी निगरानी में रोगमुक्त किया। आर्मस्ट्राँग डॉक्टर नहीं थे। पर स्वमूत्रोपचार का उन्हें बहुत अनुभव था। बडे बडे डॉक्टर्स और सर्जन्स भी उनसे हार गये।

उपवास छोडनेपर युक्त और मित आहार लेना चाहिये।

मानसिक रोगोंपर उपाय योजना

(श्लोक ४०, ७४)

रविवार दि. ६-९-७० के 'केसरी' पत्र में (मराठी वृत्तपत्र) "मानसिक रोगोंपर उपाययोजना चाहिये" नामक अग्रलेख आया था। उसमें बताये गये विचार बडे चिंतनीम हैं। हमेशा ऐसे दिखाई देता है कि नयी बीमारी के लिये नया उपाय निकलता है। मानों उनमें छुआ-छुऔवल का खेल चलता है। क्या इस प्रकारके उपचारसे बीमारी हमेशाके लिये नष्ट होती है? इस प्रश्न का उत्तर "नहीं" है। औषधोंकी कंपनियाँ औषध गुणकारी होने का दावा करती हैं। पर अनुभवसे वह सच नहीं निकलता।

पुरातन कालसे आयुर्वेद में कहा गया है कि स्वमूत्रसें कई बीमारियाँ हट जाती हैं। प्रस्तुत लेखक को भी वैसा अनुभव है। शास्त्रज्ञ शारीरिक व्याधियों पर अनुसंधान करके अनेक उपाय ढूंढ लेते हैं। पर मानसिक व्याधियोंपर वे अबतक कोई उपाय नहीं ढूंढ सकें हैं।

ऐंसी हालत में मानसिक व्याधिपर निष्ठा और श्रद्धा कें साथ स्वमूत्रोपचार किया जाय तो शायद वह व्याधि ठीक हो जायगी। शास्त्रज्ञोंको दुसरे प्रयोगोंकी तरह यह प्रयोग भी करके देखना चाहियें। क्योंकि स्वमूत्र रोग-विनाशक, जंतुनाशक, कीडें न होनें देनेवाला अमृततुल्य द्रव्य है। स्वमूत्र सब व्याधियों का रामबाण उपाय है।

लेखकका अनुभव है कि स्वमूत्रोपचार से कर्क रोग; सिरदर्द, जोडोंमें दर्द आदि बीमारियाँ दूर हो जाती हैं। अमारिकामें आधुनिक पद्धति के अनुसार गर्दन के नीचे नमक के पानीकी सूई (इंजेक्शन) लगाते हैं। उसी प्रकार पीडित रुग्णको मूत्रका इंजेक्शन देंनेंपर निश्चित फायदा होगा।

डॉ. टी. एम्. शिवानंदीयम, विद्यानगर, शिमोगा अश्थमा (दमा) आदि बीमारियोंपर इंजेक्शन देकर रुग्णोंको नंगा कर देते हैं। डॉ. शिवानंदीयम ने दि इंटिग्रेटेड मेडिकल असोसिएशन म्हैसूर राज्य की तरफ से निकलने वाले नॅशनल मेडिकल जर्नल के १२ मई १९७० के व्हॉल्यूम में जाहिर किया है कि अस्थया (दमा) के रुग्णोंको उन्हीं के मूत्र के इंजेक्शन देकर उन्होंने रोगमुक्त किया।

स्वमूत्र के साथ आयुर्वेदिक दवा लेने की रीती और शिवांबुकल्पविधि में कुछ श्लोकोंमें दवाइयों का प्रमाण बताया हैं। जहाँ वह नहीं बताया है, वहाँ उसके बारेमें वैद्यों से पूछना चाहिए।

श्लोक	दवाका नाम	शिवांबुमिश्रित दवा लेनेकी पद्धती	परिणाम
२३	गुरुच	शिवांबुमिश्रित सुबह लेना	रोगमुक्ति
२४	हर्र का चूर्ण	,, ,, ,,	बल की प्राप्ती
२५	गंधक १ मासा	,, ,, ,,	दीर्घायु-प्राप्ती
२६	कोष्ठचूर्ण	,, ,, ,,	वृध्दावस्था गायब होना
२७	मिरी, आँवला, हर्र, बहेडाका चूर्ण	,, ,, ,,	देवकान्ति आती है।
२८-२९	अबरकसत्त्व और बूंद के जितना गंधक	,, ,, ,,	जलोदर व वात नष्ट होता है।
३०-३१	तीखा, नमकीन और खट्टा वर्ज्य करके	नियमित रुपसे शिवांबुपान करना	सिद्धी आदि प्राप्त होती है।
३२	नीम के पतोंका रस	शिवांबुमिश्रित सुबह लेना	कान्ति प्राप्त होती है।
३३	नीम की खाल और भूई कुम्हडा चूर्ण	खाकर शिवांबुपान करना	जरा और रोग नष्ट होते है।
३४	कमलबीज, माक्षिक भस्म और राईका मिश्रण	शिवांबुमें मिलाके सुबह लेना	शरीर दोष चले जाते है।
३५	महुअे का फल और आँवला, हररा बहेडा चूर्ण समभाग	,, ,, ,,	चापल्य प्राप्त होता है।
३६	सैंधव और शहद का समप्रमाण	मिश्रण खाकर फिर शिवांबुपान	शरीर दिव्य होता है।
३७	गंधक, आँवला और जायफल चूर्ण	मिश्रण खाकर फिर शिवांबुपान	दुःख नाश होता है।

३८	दुध का आहार	शिवांबूपान	रोग नाश होता है।
३९	गुरुचका सत्व (श्लोक २२–२४)	बादमें शिवांबु लेना	मृत्युको जीता जाता है।
४०	शहद और शक्कर	मिश्रण लेकर शिवांबुपान	सिर अच्छा रहता है।
४१	सुंठ का चूर्ण खाना	फिर शिवांबुपान	रोग नष्ट होता है।
४२	निर्गुडी का पत्ता सुबह खाना	फिर ,,	दृष्टि दिर्घ होती हैं।
४३	मनशील चूर्ण	शिवांबुमें मिलाकर शरीरपर लेप लगाना	बाल काले होते है।
४४	शिवांबु मिट्टी के बर्तनमें औटाके $\frac{1}{4}$ रखना	$\frac{1}{4}$ रहनेपर ठंडे शिवांबुका लेप शरीरपर लगाना	अंग-पुष्ट और रोगनाश होकर बलप्राप्ती होती है।
५०–५१	औटाकर शिवांबु $\frac{1}{4}$ रखना	$\frac{1}{4}$ रखा हुआ शिवांबु शरीरपर लगाना	सर्व सिद्धी प्राप्त होती है।
५२	औटाकर $\frac{1}{4}$ रखा हुआ शिवांबु अंगपर लगाना	फिर शिवांबुपान करना	योगी अजरामर होता है।
५३	शिवामृत और आँस का मिश्रण	$\frac{1}{4}$ रखे हुए शिवांबु में मिलाकर अंगको लगाना	योगी बलवान होता है।
५४	तीखा, नमकीन और खट्टा वर्ज्य करके	तीन साल शिवांबुपान करना	कामवासनापर विजय प्राप्त होता है।
५५–५६	चना भूनके गुरके साथ खाना	$\frac{1}{4}$ रखा हुआ शिवांबु अंगको लगाना	शरीर हलका होता है।
५७	एक मासा पीपल मूल और एक मासा मीरीका चूर्ण खाना	फिर शिवांबुपान	स्वर उत्तम होता है।
५८	सूंठ का चूर्ण खाकर	फिर शिवांबुपान	योगी परिक्रमा होती है।
५९	हरं भूनकर चूर्ण खाना	,,	अंतकरण प्रसन्न होता हैं।
६०–६१	गुरुच, आंवला, हररा, बहेडा कटुत्रय, सूंठ, जीरा, पिप्पली	इनका चूर्ण खाकर शिवंबुपान	पराक्रम और वक्तृत्व प्राप्ती

६२	देवनलीका चूर्ण खाकर	शिवांबुपान	महायोगी परमानंद पाता है।
६३-६४	सूंठ, शक्कर, घी, शहद, निगुंडी का रस	यह मिश्रण शिवांबुमें मिलाकर लेना	पराक्रम और योगसिद्धीकी प्राप्ती।
६५	काले और सफेद समभाग तिल, करंजका बीज नीम पत्तोंका रस	इनका मिश्रण खाकर शिवांबुपान	महायोगी सर्वांगसुंदर बनता है।
६६-६७	शुद्ध अफीम ३ गुंजा	शिवांबु के साथ लेना	मैथुन करके वीर्य जीता जाएगा
६८	निगुंडी, हलदी, दारु हलदी और (त्रिफला) आँवला, हररा, वहेडा चूर्ण	खाकर शिवांबुपान	कामविकार जितकर योगज्ञान प्राप्ती।
६९	माका और सुवर्णमक्षिका लेह	खाकर शिवांबुपान करना	योगमार्गकी प्राप्ती।
७०	नीमछाल, चित्रकमल, पिप्पल मूल	मिश्रण लेकर शिवांबुपान करना	योगी देवोंको पूज्य होगा।
७१-७३	लाल चिचडा, बथुयेका मूल और नीम पत्तोंका रस पीकर	शिवांबु पान करना	बाल काले होना आदि
७४	उडद जितना कनेरका रस चाटना	फिर शिवांबुपान (श्लोक ४०)	भ्रमरहित होना।
७५-७७	सफेद गुंजाओंका रस, देवनाल पत्ते बथुएका बीज, मातुलुंग समभाग	चूर्ण शिवांबुमें कुटकर मटर जितनी गोलियाँ बनाना, रोज एक गोली खाकर शिवांबुपान	रोगरहित होना।
७८-७९	बरगद का चेप, करजबीज चूर्ण और अफीम	खाकर शिवांबुपान युवक	बनकर अदृश्य और प्रगट होना
८०	कावक्षी और माकारस शक्कर और घी में मिलाना	खाकर शिवांबुपान	जरा नष्ट होती हैं।
८१	जीरा, काला जीरा, दारू हलदी, सफेद राई का चूर्ण	खाकर शिवांबु पान	जरा नष्ट होती है।

८२	सफेद मुनगा काक्षा, सफेज जटामासी और राईका चूर्ण घी और शहद में	खाकर शिवांबु पान	गंधर्व के समान रूप प्राप्ति।
८३	कालनेमी विष : भारंगमूल अञ्जनमें मिलाकर	चाटकर शिवांबु पान	सुदंरता की प्राप्ति।
८४	सेवाल और रीठेके बीजका मिश्रण	शिवांबु में मिलाकर लेना	जरा रहित हो सकते हैं
८५	शिवांबु से नस्य करना	कफ, वात, पित्त नष्ट होकर भूख लगती है	देह विशाल और बलवान होती है
८६–९०	दिन - रात ६ बार शिवांबुसे मर्दन	दीर्घायुष्य प्राप्ति	शरीर और जाडे दृढ होते हैं।
९१–९३	वसत में शहदमे हरर‍ा, सूंठ का चूर्ण	चाटके शिवांबु पान, तीखी चीजे वर्ज्य	कफ, पित्त, वात चले जाते हैं।
९४, ९५	ग्रीष्म ॠतुमें हर्र पाकड चूर्ण	खाकर शिवांबुपान	खेचरी दृष्टी की सिद्ध प्राप्ति
९६, ९७	वर्षा में हर्र सैंधव पीपलमूल का चूर्ण	दूध के साथ लेकर शिवांबु पान	सुवर्ण कांति होती है।
९८, ९९	शरद ॠतुमे हर्र, बहेडा, मिस्त्री चूर्ण	खाकर शिवांबुपान	योगासिद्धी की प्राप्ति
१००, १०१	हेमंत में आँवला, हर्र, सूंठ चूर्ण	,, ,,	वक्तृत्त्व और ज्ञान प्राप्ति
१०२, १०३	शिशिर में पाकड, हर्र सूंठ चूर्ण	,, ,,	सर्व प्रिय होना

(श्लोक १०४, १०५ व १०६ - शिवांबुपान शुरू रहता है, तब चना, अरहर, मसूर, उडद, वातकारी फल, वातकारी सब्जी, स्त्रीसेवन, तीखा, खट्टा, नमकीन आदि वर्ज्य करना चाहिये।

(मट्ठा, दूध, घी, मक्खन, ज्वारकी रोटी, मधुमेह के रुग्ण को मडुआ की रोटी खानी चाहिये। मूँग सबसे उत्तम। थोड़े में कहना होगा कि युक्त और मित आहार चाहिये। जो जीभ काबूमें रखेगा, वह दुनिया जीतेगा। हर तरहके खान-पानसे रोग उत्पन्न होते हैं)

शिवांबुकल्पविधिके अनुसार शिवांबुकेसाथ लेने के आयुर्वेदिक औषधोंकी सूची।

अफीम, अबरक, आंवला, लाल चिचडा, कोष्ठचूर्ण, कुम्हडा (भुई), कमलबीज, कक्षा जल (ओस), कालनेमीविष, कावली पत्तेका रस, नीम की खाल, नीम के पत्तोंका रस, कटुत्रय, मिस्त्री, गुरूचसत्त्व, गंधक, बबुएका मूल, जटामासी, जीरा, जायफल, काले तिल, सफेदतिल, घी त्रीफला, दारुहलदी, देवनाल, दूध, निर्गुंडी के पत्तोंका रस, नीम के पतोंका रस, नीमकी खाल, पाकड, पाकडमूल, बहेडा, भारंगमूत्र, मीरी, महुएका फल, माक्षिकभस्म, मातुलूंग मूल, माका, मनशील, शहद, सफेद, राई, मकारस, रीटा का बीज, बरगदका चेप, सफेद मुनगा, काई, कालाजीरा, शिरोमूत, काला मुनगा, सूंठ, सैंधव, सुवर्ण माक्षिक, शक्कर, हररा, (दारु) हलदी, चना।

२७

डामरतंत्र का शिवांबुकल्प विधि

अथ वक्ष्ये महेशानी ! क्रियासिद्धिप्रदायिनी।
पात्राणि दिहितानीह शास्त्रविद्भिःप्रयत्नतः ॥ १ ॥
सौवर्णं राजतं ताम्रं कास्यजं रीतिजं तथा।
आयसं मृण्मयं चैव नागनं काचसंभवम् ॥ २ ॥
वैणवं काष्ठसंभूतं बिल्वजं चाम्बसंभवम्।
अस्थिजं चर्मजं चैव पात्रं वै पर्णसंभवम् ॥ ३ ॥
एषामन्यतमे पात्रे धारयेच्च शिवांबुकम्।
उत्तमं मृण्मयं पात्रं ताम्रजं देवि सूत्तमम् ॥ ४ ॥

(१ से ४) हे पार्वती ! प्रयत्नसे सिद्धी प्राप्त करा देनेवाले कुछ शास्त्रज्ञोंने योग्य पात्रोंका (बर्तन) वर्णन किया हैं। सुवर्ण, चांदी, कासा, पीतल, लोह, रांगा, कांच, मिट्टी, बाँस, लकडी, बिल्वज, कद्दू, हड्डी, चमडा आदिसे बने हुए पात्र या पत्रोंका दोना, इनमेंसे किसी एकमें शिवांबु लेना चाहिये। इनमें मिट्टीका बर्तन सबसे अच्छा है, उसके बाद ताँबेका।

क्षक्षारकटुकाम्लाशी साधकः श्रमवर्जितः।
शयीत लघुभुग्रात्री भूमिशायी जितेन्द्रियः ॥ ५ ॥

(५) साधकको क्षार, नमकीन, तीखा नहीं खाना चाहियें। कष्ट नहीं करने चाहिये। हलका आहार लेना चाहिये। जितेंन्द्रिय रहकर भूमिपर शयन करना चाहिये।

चतुर्थ्यामवशिष्टायां रात्रावुत्थाय बुद्धिमान।
मूत्रोत्सर्गं प्रकुर्वीत प्राङ्मुखः परमाशयः ॥ ६ ॥

(६) ऐसे बुद्धिमान्, मनुष्यको रातका चौथा हिस्सा बाकी रहनेपर उठना चाहिये। पूरबकी तरफ मूंह करके मनःपूर्वक मूत्रोत्सर्ग करना चाहिये।

आदिधारां परित्यज्य चरमां च त्यजेत् बुधः।
मध्यधारां प्रगृण्हियात् एषोऽत्र विधिरुत्तमः ॥ ७ ॥

(७) पहली और आखिर की मूत्रधार छोडकर बीचका मूत्र लेना चाहिये। यह पद्धति उत्तम है।

यथा भुजंगदेहेषु मुखे पुच्छे विषं भवेत्।
एवं शिवांबुधारायां प्रकारः प्रथितः शिवे ॥ ८ ॥

(८) (अपना खुदका मूत्रही शिवांबु कहलाता है।) जिसप्रकार सांप के मुँह में और पूंछमें विष रहता है उसीप्रकार शिवांबु की पहली और अखरी धारामें दोष रहता हैं। यह बाब प्रसिद्ध हैं।

शिवांबु चामृतं दिव्यं जरारोगविनाशनम्।
तदादाय महायोगी कुर्याद्वै निजसाधनम् ॥ ९ ॥

(९) शिवांबु एक दिव्य अमृत हैं। वह जरा और रोगोंको नष्ट करनेवाला हैं। महायोगीको इसको प्राशन करके फिर योगसाधना करना चाहिये।

मुखशुद्धि विधायार्थं कृत्वा चावश्यकीं क्रियाम् ।
पिबेच्छिवांबु विमलं जन्मरोगविनाशनम् ।। १० ।।

(१०) उठकर मुंह धोने के बाद आवश्यक क्रियाएँ करके स्वच्छ शिवांबु-पान करना चाहिये । जन्मसे लगी हुई बीमारीयाँ नष्ट हो जाती है ।

मासमात्रप्रयोगेण निर्मलाभ्यंतरो भवेत् ।
मासद्वयाभ्यासवशात् पाठवं चेन्द्रियादिषु ।। ११ ।।

(११) एक महीना यह प्रयोग करनेसे शरीर अंदरसे साफ होगा । दो महीने इसका उपयोग करनेसे सब इंद्रियाँ कार्यक्षम होंगी ।

मासत्रयप्रयोगेण रोगदुःखविनाशकम् ।
पञ्चमासाभ्यासतोऽपि दिव्यदृष्टिरनातुरः ।। १२ ।।

(१२) यह प्रयोग तीन महीने करनेसे सब रोग और दुःख दूर होंगे । पाँच महीने यह प्रयोग करनेपर रोगमुक्त होकर दिव्यदृष्टि प्राप्त होगी ।

षणमासाज्जायते योगि महाबुद्धिः कृतागमः ।
सप्तमासप्रयोगेण जायते बलवत्तरः ।। १३ ।।

(१३) छः महीने यह प्रयोग करनेपर मनुष्य अत्यंत बुद्धिमान होगा । सात महीनोंके प्रयोग से वह अत्यंत बलवान होगा ।

अष्टमासाभ्यासवशात् स्वर्णकान्ति स्थिराभवेत् ।
नवमासप्रयोगेण क्षयकुष्ठविनाशनम् ।। १४ ।।

१४) आठ महिने प्रयोग करनेसे शरीर को सुवर्णकान्ति प्राप्त होकर वह कायम रहेगी । नौ महीनोंके प्रयोगसे क्षय और कुष्ठरोग नष्ट होंगे ।

दशमासप्रयोगेण जायते तेजसां निधिः ।
एकादशभिरेवात्र मासैः सर्वाङ्गनिर्मलः ।। १५ ।।

१५) दस महिनोंके प्रयोग से मनुष्य तेजोनिधि बन जाएगा । ग्यारह महिने प्रयोग करनेपर उसका सर्वांग निर्मल होगा ।

जायते मानवो वर्षप्रयोगेणार्कसंनिभः ।
वर्षद्वयेन जायंते पृथिवीतत्त्वसंजयी ।।१६।।

१६) एक वर्ष प्रयोग करनेसे मनुष्य सूर्य के समान तेजस्वी बनता है। दो वर्ष प्रयोग करने से वह पृथ्वीतत्त्व पर (गंध) विजय पाता है।

वर्षत्रयेण जायेत अप्तत्त्वजयकृद्ध्रुवेत् ।
चतुर्वर्षाभ्यासतस्य तेजस्तत्त्वजयी ध्रुवम् ॥१७॥

१७) तीन साल प्रयोग करनेपर जलतत्त्वपर विजय मिलेगी। चार वर्षोंके प्रयोग से तेजतत्त्वप्रर विजय मिलेगी, यह बात पक्की है ।

पञ्चवर्षाभ्यासतश्च योगी वायुजयी भवेत् ।
सप्तवर्षप्रयोगेण अहंकारजयी भवेत् ॥१८॥

१८) पाँच वर्षोंके प्रयोग से योगी वायुपर जय पायेगा। सात वर्षोंके प्रयोगसे अहंकार को जीतेगा।

अष्टवर्षप्रयोगेण महत्तत्त्वजयी भवेत् ।
नववर्षाभ्यासतोऽयं जन्मात्ययविवर्जितः ॥१९॥

१९) आठ वर्षोंके प्रयोगसे वह महत्तत्त्वपर विजय पाएगा। नौ वर्षोंके अभ्यास से जन्म का नाश नहीं होगा।

दशवर्षप्रयोगेण खेचरः श्रमवर्जितः ।
तथा चैकादशे वर्षे शृणोत्याभ्यंतरं ततः ॥२०॥

२०) दस वर्षोंके प्रयोगसे मनुष्य बिना किसी श्रम से आकाश में संचार करने-लायक होगा। ग्यारह साल प्रयोग करनेपर वह शरीर के अंदर की हलचल सुन सकेगा ।

द्वादशाब्दप्रयोगेण जीवेदाच्चन्द्रतारकम् ।
बाध्यते नैव सर्पाद्यैर्विषाद्यैर्न विहिस्यते ।
न दह्यतेऽग्निना क्वापि काष्ठवत्तर तेजलम् ॥ २१ ॥

२१) बारह वर्ष प्रयोग करनेसे वह मनुष्य जबतक चंद्र और नक्षत्र होंगें, तबतक जिएगा। उसपर सर्प आदि प्राणियोंके विषका परिणाम नही होगा। सर्प आदि के काटनेसे वह नहीं मरेगा। लकडी के समान वह पानीपर तरेगा, डूबेगा नही ।

अन्यं देवि ! प्रकारं ते वक्ष्यामि शृणु यत्नतः ।
शिवांबुमिश्रितं चूर्णं गडूच्या भक्षयेन्नरः ॥ २२ ॥
एवं षण्मासतो रोगैर्विमुक्तः प्राप्नुयात्सुखम् ।
हरितकीभवचूर्णं भक्षयेत् प्रयोगतः ॥ २३ ॥

शिवाम्बुपानकं कुर्याज्जरारोगविनाशनम् ।
एकवर्षाभ्यासवशात् जायते बलवत्तरः ।। २४ ।।

(२२, २३, २४,) श्रीशंकरजी पार्वती से कहते है, "हे देवी ! मैं और भी कुछ प्रकार तुमको बताऊँगा।" अगर मनुष्य गुरुत्रक चूर्ण शिवांबु में मिलाकर छें महीने पिएगा, तो वह रोगमुक्त होकर सुख पाएगा। हर्रका चूर्ण शिवांबु में मिलाकर पीने से जरा और रोग नष्ट होते है। पूरे एक साल पीने से आदमी अत्यंत बलवान् होता है।

गंधकं माषमात्रं तु प्रातःकाले च भक्षयेत् ।
एवं वर्षत्रयाभ्यासाज्जीवेदाच्चन्द्रतारकम् ।
तस्य मूत्रपुरीषाभ्यां शुक्लं भवति काञ्चनम् ।। २५ ।।

(२५)रोज सुबह एक मासा गंधकका शिवाबु में मिलाकर सेवन करना चाहिये। लगातार तीन साल ऐसा करनेसे जब तक चंद्र और सितारे रहेंगे, तबतक आदमी जीमित रहेगा। उसके मसमूत्रसे सुवर्णका रंग सफेद हो जाता है।

कोष्ठं शिवाबुमिलितं भक्षयेत क्रमयोगतः ।
द्वादशाब्दप्रयोगेण वलीपलितवर्जितः ।
नागायुतैः समबलो जीवेदाच्चन्द्रतारकम् ।। २६ ।।

(२६) यथायोग्य आचारक्रमसे कोष्ठचूर्ण शिवाबुमें मिलाकर बारह साल पीना चाहिये जिससे शरीपर झुरियाँ आना, बाल सफेद होना आदि बूढेपन की बातें नहीं होती है। दस हजार हाथियोंका बल पाकर वह आदमी चंद्र और नक्षत्र जबतक होंगे, तबतक जी सकेगा।

मरीचं त्रिफलाचूर्णं मिश्रितंच शिवाम्बुना ।
एतद्योगप्रयोगेण जायतेऽप्यमरद्युतिः ।।२७ ।।

(२७) मीरी और त्रिफला चूर्ण का मिश्रण करके शिवांबु के साथ लेनेसे शरीरको देवकान्ति प्राप्त होती है।

गन्धकं चाभ्रसत्त्वेन मिश्रितं क्रमयोगतः ।
भक्षयेदम्बुमात्रं यः सहितेन शिवांबुनाम् ।। २८ ।।

नाशयेदोदरान् रोगान् तथा वायुसमुद्भवान् ।
बलवान् दिव्यकान्तिश्च दीर्घायुः कालवञ्चकः ॥ २९ ॥

(२८,२९) अभ्रकका सत्त्व और गंधक का मिश्रण पानी की बूंद के जितना शिवांबु में मिलाकर लेना चाहिये । उससे उदररोग और वातरोग नष्ट होते हैं । उससे आदमी बलवान दिव्य कान्तिवाला और दीर्घायु होकर कालबंचक कालको छकाता है ।

शिवांबुभक्षणं यस्तु नित्यं कुर्वन दिने दिने ।
आक्षाराम्लकटून्यक्ति स सिद्धिशीघ्रमृच्छति ॥ ३० ॥

(३०) जो मनुष्य हमेशा हरदिन शिवांबु लेता है और नमकीन, खट्टा, तीखा आदि नहीं खाता है, वह बहुत जल्दी सिद्धी प्राप्त कर सकता है ।

सर्वोपद्रवनिर्मुक्तः सदाशिववपुर्धरा ।
ब्रह्मांडगोलके क्रीडन् देववन्मोदते चिरम् ॥ ३१ ॥

(३१) वह उपद्रवोंसे मुक्त होता है । शंकरजी के समान उसका शरीर तेजस्वी होता है । वह पूरे ब्रह्मांडमें क्रीडा कर सकता है । और देवके समान आनंदित रहता है ।

निम्बस्य पत्रजरस तन्मिश्रं च शिवांबुना ।
यः सेवते योगयुक्तो स भवेदमरोपतः ॥ ३२ ॥

(३२) योगसाधन करनेवाला मनुष्य नीमके पत्तोंका रस शिवांबुमें मिलाकर पीता है । इसलिये वह देवके समान कान्तिमान होता है ।

निम्बत्वङ्मिश्रित चूर्णं विदारीकन्दसंभवम् ।
आवर्षसेवनाज्जन्तुः कायदोषांस्त्यजेत्ततः ॥ ३३ ॥

(३३) नीमकी खालका चूर्ण और भुईकुम्हडेका चूर्ण शिवांबुमें मिलाकर एक सालभर लेनेसे शरीरके सारे दोष हट जाते हैं ।

पद्मबीजं समाक्षीकं सर्षपेण समन्वितम् ।
शिवाम्बु भक्षयेन्नूनं जायते देहलाघवम् ॥ ३४ ॥

(३४) कमलबीज, माक्षिकभस्म और राई का मिश्रण शिवांबु में मिलाकर सेवन करना चाहिये । उससे शरीर चपल होता है ।

मधूकफलबीजंच त्रिफलासमभागताः ।
भक्षयेदनिशं तेन जरारोग भवेत् ॥ ३५ ॥

(३५) महुएका फल और त्रिफला समभाग लेकर उसको हमेशा भक्षण करके फिर शिवांबुपान करना चाहिये। जिससे जरा और रोग नष्ट होते हैं।

क्षौद्रं ससैन्धवं प्रातर्भक्षयेत्समभागतः ।
पश्चाच्छिवांबुसंपायी भवेद् दिव्यशरीरभाक् ॥ ३६ ॥

३६) सैंधव और शहद को समभाग करके उनका मिश्रण सुबह लेकर शिवांबु पीनेसे शरीर दिव्य होता है।

गंधकं धात्रिचूर्णंच जातीफलसमन्वितम् ।
आदौ जग्ध्वा ततः पेयं शिवाम्बुरुग्विनाशकृत् ॥ ३७ ॥

३७) गंधक, आँवलेका चूर्ण और जायफल का चूर्ण मिश्रित करके उसको खाकर शिवांबु पीनेसे किसी भी प्रकार का दुःख नष्ट होता है।

पयोभक्षःसप्तवर्ष नित्यं पानं शिवाम्बुनः ।
करोति सततं रोगनाशनं बलिपुष्टिकृत् ॥ ३८ ॥

(३८) केवल दुग्धाहार और शिवांबुपान रोज करना चाहिये। सात साल ऐसा करनेपर रोगनाश होता है। शरीर का बल बढकर वह पुष्ट होता है।

करोत्यशनकं यस्तु चूर्णस्यामृतकस्यच ।
पश्चाच्छिवाम्बुपानं च कुर्वन्मृत्यंजयेध्रुवम् ॥ ३९ ॥

३९) गुरुच का सत्त्व खाकर उसपर शिवांबुपान करनेसे मृत्यू को जीता जा सकता है।

मधुशर्करयोपेतं पिबेद् यश्च शिवाम्बुकम् ।
मासषट्कवशेनायं रोगमुक्तः सुवाक्शिरा ॥ ४० ॥

(४०) शहद, शक्कर और शिवांबु मिलाकर पीनेवाला छे महीनों के अंदर रोगमुक्त होगा। उसकी वाणी और मस्तक सुस्थिति में रहेगा।

कृत्स्नां शुण्ठीयुतां चापि चूर्णितां यस्तु भक्षयेत् ।
पश्चाच्छिवाम्बुपानीयं रोगान्जयति सुस्फुटम् ॥ ४१ ॥

(४१) सूँठ का चूर्ण खाकर शिवांबुपान करनेसे सारे रोग नष्ट होते हैं

प्रातः शिवाबुपानेन निर्गुंडीपत्रभक्षणात् ।
जायते बलवान्योगा दीर्घदृष्टिः कृतार्थकः ॥ ४२ ॥

(४२) सुबह निर्गुंडी के पत्ते खाकर शिवांबुपान करनेसे रुग्णकी दृष्टि दीर्घ होकर वह कृतार्थ होता है।

मनःशिलां यस्तुयोगी चूर्णितान्तु शिवाम्बुके ।
विलेपनादरोगः स्यादंगे कृष्णशिरोरुहः ॥ ४३ ॥

(४३) मनशीलका चूर्ण करके शिवांबुमें मिलाना चाहिये । फिर उसका लेप शरीरपर लगाना चाहिये जिससे योगी रोगसहित होकर उसके सिरके बाल काले होते हैं।

अथ लेपनविधिः

अथ वक्ष्ये महेशानि ! लेपनंच शिवाम्बुना ।
यथोक्तलेपनाद्योगी योगसिद्धिमवाप्नुयात् ॥ ४४ ॥

४४) अब लेपनविधि कहता हूँ। यथायोग्य लेपन करनेसे योगी सिद्धी प्राप्त करता है।

शिवांबु प्रथमं ग्राह्यं मृत्पात्रे स्थापयेद् ध्रुवम् ।
तुर्यभागावशिष्टं तत् स्वाङ्गशीतलमुद्धरेत् ॥ ४५ ॥

४५) मिट्टी के बरतन में शिवांबु लेकर औटाना चाहिये। औटाकर उसका चतुर्थांश बरतन में रहना चाहिये। उसके बाद वह अपने शरीर के जितना ठंडा होने देना चाहिये । फिर उसका उपयोग करना चाहिये ।

तस्य मन्त्रं प्रवक्ष्यामि ग्रहणादानसर्जने ।
मन्त्रः ॥ ॐ ह्रीं क्लीं भैरवाय नमः ॥
अनेन ग्रहणं कुर्याद्योगी यत्नाच्छिवांबुनः ।

मंत्रः ।। ॐ श्री क्लीं उड्डामरेश्वराय नमः ।।
अनेनादाय तत्पानं योगी कुर्वन्नदोषभाक् ।। ४६ ।।

४६) ग्रहण लगते समय और छूटते समय निम्नलिखित मंत्र का जप करना चाहिये। मंत्र। ॐ ह्री क्लीं भैरवाय नमः । यह मंत्र कहकर योगी को शिवांबु का पात्र हाथ में लेना चाहिये। ॐ श्रीं क्लीं उड्डामरेश्वराय नमः यह मंत्र कहकर योगीको शिवांबुपान करना चाहिये । वह दोषभागी नहीं होता है।

मन्त्रः ।। ॐ सर्वसृष्टिप्रभवे रुद्राय नमः ।
अनेन देवी ! मन्त्रेण प्रयत्नोत्सर्जनं चरेत् ।। ४७ ।।

४७) मन्त्रः । ॐ सर्वसृष्टिप्रभवे रुद्राय नमः । यह मंत्र कहकर प्रयत्नपूर्वक शिवांबु बाहर निकालना चाहिये (पेशाब करना चाहिये)

तस्समादाय स्वाङ्गे तु योगी संलेपयेच्छिवे ।
तेनाङ्ग पुष्टिर्विपुला रोगनाशो विशेषतः ।। ४८ ।।

४८) शरीरपर शिवांबु का लेप देना चाहिये । उससे शरीर पुष्ट होता है । विशेष करके रोगनाश होता है।

योगीन्द्रत्वमवाप्नोति गतिरव्याहत भवेत् ।
नागायुतबलो योगी यथेष्टं भोजनी भवेत् ।। ४९ ।।

४९) इससे योगी इंद्र बनेगा । उसकी गति और संचार को प्रतिबंध नहीं होगा । उसको दस हजार हाथियोंका बल प्राप्त होगा। फिर वह चाहे जो पदार्थ खाकर पचा सकेगा।

अपक्वं शिवतोयं तु लेपयेन्मूढबुद्धितः ।
रोगवृद्धिमवाप्नोति सर्वाङ्गशिथिलो भवेत् ।। ५० ।।

(५०) शिवांबु औटाकर एक चतुर्थांश रखकर फिर शरीरपर लगाना चाहिये । ऐसा न करना मूर्खता है । क्योंकि बिना औटाया शिवाबु शरीरपर लगानेसे रोग बढ़ते हैं । और सारे अंग शिथिल हो जाते हैं ।

तस्मादपक्वं न क्वापि शिकतोयं विलेपयेत् ।
पक्वे शिवांबुके देवि ! सर्वसिद्धिः करे स्थिता ।।५१ ।।

(५१) इसलिये शरीरको अपक्व शिवांबु कभी नहीं लगाना चाहिये। पक्व शिवांबुविधिसे सर्व सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं।

शिवश्च्युताम्बुपानेन शिवाम्बुविधिना ततः।
शिवतोयविलेपाश्च योगी स्यादजरामरः ॥ ५२ ॥

(५२) शिवांबुपान तथा शिवांबुलेपन से योगी अजरामर होगा।

तस्य मूत्रपुरीषाभ्यां शुक्लं भवति काञ्चनम्।
शिरोमृतं कक्षजलं शिवोतोयविमिश्रितम् ॥
लेपयेदंके योगी महाबलयुतोऽप्यरुक् ॥ ५३ ॥

(५३) उसके मूत्र और विष्ठासे (मलसे) सुवर्ण का रंग सफेद होता है। शिरोमृत और ओसका पानी शिवांबुमें मिलाकर शरीरको लगाना चाहिये। फिर वह योगी महाबलवान और रोगरहित है।

प्रातर्निरंतरं योगी पानं कुर्व शरत्त्रयम्।
अक्षारतिक्तकटुकभोजी कामेश्वरो भवेत ॥ ५४ ॥

(५४) प्रातःकालमें योगीको रोज लगातार तीन साल शिवांबुपान करना चाहिये। उसको क्षार, कड़ुए और तीखे पदार्थ नहीं खाने चाहिये। ऐसा करनेसे वह कामेश्वर होता हैं। वह कामवासनापर विजय पा सकता है।

दूरदर्शनगामी स्माद् दूरघ्राणकरोत्यरुक्।
चणकान् गुणसंमिश्रान् भर्जितान् योऽजितः प्रिये ॥ ५५ ॥
पश्चाच्छिवजलं पीत्वा तच्चाप्यङ्गे विलेपयेत्।
षण्मासाभ्यासवशतोजायतेङ्गलघुत्वभाक् ॥ ५६ ॥

(५५, ५६) चने भुनकर गुडमें मिलाकर खाने चाहिये। उसके बाद शिवांबु पीकर उसीका शरीरपर लेपन करना चाहिये। ऐसा करनेसे छे महीनोंके बाद शरीर हलका हो जाता है।

कणामूलं माषमात्रं मरीचं माषमात्रकम्।
यो भक्षयेत् प्रत्यहं च पश्चाच्छिवजलं पिबेत ॥
मासमात्रेण देवेशि! सुस्वरः कायरोगजित् ॥ ५७ ॥

(५७) पीपलका मूल (एक मासा) एक मासा मीरी, इन दोनोंको नित्य खाकर उसपर शिवांबु पीना चाहिये। ऐसा करनेसे, हे देवेशी! एक महीनेके अंदर उसका स्वर उत्तम होगा। और वह रोगमुक्त होगा।

सर्वदा चूर्णितं विश्वौषधं योगीश्वरो पिबेत् ।
पश्चाच्छिवांबुपायीच महाबलपराक्रमः ।
नागायुतसमप्राणो देवस्त्रीप्रार्थ्ययौवनः ।। ५८ ।।

(५८) योगीश्वरको हमेशा सूंठ का चूर्ण खाकर शिवांबु पीना चाहिये। फिर वह महाबलवान् और पराक्रमी होगा। उसे दस हजार हाथियोंका बल प्राप्त होगा। उसको ऐसा तारुण्य प्राप्त होगा जिसपर देवस्त्रियाँभी लट्टू होंगी।

अभयां भर्जितां चूर्णीकृतां मुक्त्वा पिबेच्छिवे।
सर्वाङ्गमल निर्मुक्तो देवकायः प्रसन्नधीः ।।५९ ।।

(५९) हर्रे भूनकर उसका चूर्ण करना। उसको खाकर शिवांबु पीना। ऐसा करनेसे शरीरके सब दोष नष्ट होंगे। देवके समान कान्ति होगी, अंतःकरण प्रसन्न होंगा।

गडूची त्रिफलाचूर्ण समभागकटूमिकम् ।
भक्षयेत्क्षीरभक्ताशी शिवांबुपरिसेवकः।
अब्दाद् योगी विजानाति शास्त्रतत्त्वं यथोक्तवत् ।। ६० ।।

(६०) गुरूच, त्रिफला और कटुत्रय, सुँठ, जीरा, पिप्पली इन चीजोंका चूर्ण खाकर दूध-चावल का परहेज रखना चाहिये। चूर्ण खाकर शिवांबुपान करना चाहिये।

देववज्जायते भूमौ महाबलपराक्रमः।
वर्षत्रयाभ्यासतः स्यात्सर्वज्ञः सर्वसिद्धियुत् ।।
वक्तानधीतशास्त्रस्य त्रैलोक्यमपि पश्यति ।। ६१ ।।

(६१) एक साल यह प्रयोग करनेसे योगी शास्त्रतत्त्व अच्छी तरह समझने लगता है। वह महाबलवान् और देवता के समान महापराक्रमी होता है। लगातार तीन साल अभ्यास करनेपर वह सर्वज्ञ होकर सर्वसिद्धी प्राप्त कर सकता है। वह उत्तम वक्ता होकर शास्त्राध्ययन अच्छी तरह कर सकता है। सारा त्रैलोक्य उसकी दृष्टीके सामने आ सकता है।

शरपुङ्खां स पंचाङ्गचूर्णितंच शिवाम्बुना।
पिबेत् योगी महायोगी परमानन्दभाग्भवेत् ।। ६१ ।।

(६२) देवनलका शिवांबुमिश्रित पंचाङगचूर्ण सेवन करनेवाला योगी महायोगी होकर परमानंद प्राप्त करेगा।

महौषधं महादेवी ! मधुरत्रयमिश्रितम् ।
सनिर्गुण्डीपत्ररसं पिबेच्छिवजलान्वितम् ।। ६३ ।।
एकमासेन देवेशि ! दृढाङगोऽमितविक्रमः ।
अब्दान्तराद्योगसिद्धः कर्तव्यं योगमाप्नुयात् ।। ६४ ।।

(६३, ६४) सूंठ, शक्कर, घी, शहद और निर्गुंडी का रस शिवांबु में मिलाकर पीनेसे मनुष्य एक महिने के अंदर दृढ शरीरवाला और अतुल पराक्रमी बनेगा। एक साल के बाद योगसिद्धी प्राप्त होगी।

कृष्णांस्तिलांस्तथा श्वेतान् समभागान् प्रभक्षयेत् ।
करंजबीज संयुक्तं पिचुमर्दरसेनच ।
भक्षयेत्तन् महायोगी पक्षात्सर्वाङगसुंदरः ।। ६५ ।।

(६५) काले और सफेद तिल समभाग लेकर उसमे करंजबीज और नीम के पत्तोंका रस मिलाकर सब का सब मिश्रण खाने से महायोगी एक पखवाडे में सर्वांगसुंदर बन सकता हैं।

अहिफेनं दग्धशुद्धं गुंजात्रयमितं बुधः ।
शिवांबुसहितं पीत्वा यथेष्टं मैथुनं भवेत् ।। ६६ ।।
जितवर्यो जितश्वासो जितकामरुषादिकः ।
बहूकालं विचरते निखिलां वसुधामिमाम् ।। ६७ ।।

(६६, ६७) आफीम अंगारोंपर जलाकर शुद्ध करके उसमे से तीन गुंजाएँ शिवांबु के साथ लेनेपर मनुष्य यथेष्ट मैथुन कर सकेगा। वह वीर्य जीत सकेगा। वह श्वास, कामविकार, क्रोध, आदिको जीत सकेगा। संपूर्ण पृथ्वीपर बहुत काल संचार कर सकेगा।

निर्गुण्डी सनिशायुग्मां त्रिफलां भक्षमेत्ततः ।
पिबोच्छिवजलं देवि त्रिमास योगविच्छिवे ।
जायते सर्ववित्सूक्ष्मः कामकोटिसमद्युतिः ।। ६८ ।।

(६८) निर्गुंडी, हलदी, दारुहलदी और त्रिफला भक्षण करके शिवांबु पीनेसे तीन महीनों में आदमी को योगज्ञान प्राप्त होता है। वह सर्ववेत्ता

होकर सूक्ष्म दृष्टी पाता है और कोटी मदनों के समान कांतिमान होता है।

भृंगराजं समाक्षीकं लीढवाच शिवतोयकम्।
पीत्वा पीत्वा महेशानि ! योगारूढः क्रमेण तु।
षण्मासाभ्यासतः कालवंचाको दीर्घदर्शनः ॥ ६९ ॥

६९) भांगरा और सुवर्णमाक्षिक का लेह खाकर शिवांबुपान करने से मनुष्य क्रमशः योगमार्गपर आगे बढता है। छे महिनों के अंदर वह काळ को छका सकता हें और उसे दूरका दिखाई देता है।

निम्बत्वचं साग्निमूलं कणामूलसमन्वितम्।
शिवांबुसेवी षण्माज्जायतेऽमरपूजितः ॥ ७० ॥

(७०) नीमकी खाल, चित्रकमल और पिप्पलीमूल का मिश्रण शिवांबुके साथ छे महीने लेनेसे मनुष्य देवोंको पूज्य होगा।

रक्तापामार्गजं मूलं चक्रमार्दस्य मूलकम्।
सपारिभद्ररसकं पीत्वा शिवजलं पिबेत् ॥ ७१ ॥

(७१) लाल चिचडेका मूल, बथुएका मूल और नीमके पत्तोंका रस प्राशन करना चाहिये। उसके बाद शिवांबु पीना चाहिये।

कृष्णकेशो रोगमुक्तो वलीपलितवर्जितः।
दशयोजनपर्यंतमनायासेन गच्छति ॥ ७२ ॥

(७२) उसके बाल काले होकर वह रोगमुक्त होगा। सफेद बाल, गंजी खोपडी आदि वृद्धावस्था के लक्षण नष्ट होंगे। उसकी दृष्टि अनायास चालीस कोसतक पहूँचेगी।

शृणोति दूरवृत्तान्तं जानाति परचित्तगम्।
राजचंद्रमुखीचित्त मोषकः परमेश्वरीम् ॥ ७३ ॥

(७३) उसको दूरकी बातें सुनाई देती है। दुसरों के मनकी बाते वह जानता है। चंद्रमुखी राजकन्या के चितका चोर भी वह हो सकता है।

करवीररसं देवि ! माषमात्रं लिहेत् सदा।
शिवांबुसेवको वर्षाज्जायते भ्रमवर्जितः ॥ ७४ ॥

(७४) उडद के जितना कनेर का रस चाटकर शिवांबुपान करमेसे एक वर्षमें भ्रमरहित हो सकते हैं।

श्वेतगुंजारस पत्र शरपुङ्खाससंभवम्।
बीजं च चक्रमर्दस्य मातुलुंगस्य मूलकम् ॥ ७५ ॥

(७५) सफेद गुजाओंका रस, देवनल के पत्ते, बथुएका बीज और मातुलुंग का मूल समभाग लेकर चूर्ण करना चाहिये।

समभागं चूर्णयित्वा गुटिकां शिवतोयतः।
बध्नीयाद् मटरप्रख्यां खादेप्रत्यहमेककाम् ॥ ७६ ॥
तदूर्ध्वं शिवतोयस्य पानकं विधिवच्चरेत।
एक मासेन योगीन्द्रो जायतेऽमलविग्रहः ॥ ७७ ॥

(७६, ७७) फिर शिवाबुमें कूटकर उसकी मटर की जितनी गोलियाँ करनी चाहिये। नित्य एक एक गोली खानी चाहिये। उसपर यथाशास्त्र शिवांबुपान करना चाहिये। ऐसा करनेसे योगीन्द्र एक महीने में रोगरहित होगा:

करंजबीजचूर्णं तु वटक्षीरविचूर्णितम्।
साहिफेनं लिहेत् प्रातः शिवतोयस्य पानकृत ॥ ७८ ॥

(७८) बरगदका चेप निकालकर उसपर करंजबीज का चूर्ण और अफीम डालकर सुबह चाटना चाहिये। उसपर शिवांबुपान करना चाहिये।

षण्मासाज्जायते योगी युवा षोडषवार्षिकः।
अदृश्यभावमाप्नोति स्वेच्छयोद्भवमेव च ॥ ७९ ॥

(७९) जिससे योगी छे महीनों में सोलह साल के युवक के समानं जवान होगा। वह स्वेच्छासे अदृश्य या प्रकट हो सकेगा।

काकजंघापत्ररसं भृंगराजरसान्वितम् ।
मधुत्रययुतं लीढ्वा वलीपलितवर्जितः ।। ८० ।।

(८०) काकजंघाके पत्तोंका रस, शहद, शक्कर, और घी का मिश्रण चाटनेसे वृध्दावस्थाके चिन्ह नष्ट होते हैं।

जीरकद्वितयं दारुमिश्रितं सितसर्षपम् ।
मासमात्राभ्यासतः स्यात् जरापलितवर्जितः ।। ८१ ।।

(८१) जीरा, कालाजीरा, दारूहलनी और सफेद राई का चूर्ण खाना चाहिये, जिससे एक महीनेमें वृद्धावस्था के लक्षण नष्ट होते हैं ।

सौभाञ्जनद्वयं मांसी श्वेतसर्षपबीजकम् ।
घृतक्षौद्रयुतं पीत्वा भवेद्‌गंधर्वरूपधृक् ।। ८२ ।।

(८२) कासा और सफेद मुनगा, जटामांसी और सफेद राई का बीज शहद और घी में मिलाकर चाटनेसे गंधर्वके समान रूप होगा ।

कालनेमिं सभार्गीकं नवनीतविलोडितम् ।
पीत्वा पश्चात् विबेद्योगी शिवांबु रुचिरो भवेत् ।। ८३ ।।

(८३) कालनेमी नामक विष, और भारंगमूल मक्खन में मिलाके चाटकर शिवांबु पीनेसे योगी सुंदर बनेगा ।

जलकेसरकं चैव द्रावणीबीजमिश्रितम् ।
शिवांबुलोडितं खादेद्वत्सराज्जायतेऽजरः ।। ८४ ।।

(८४) काई और रीठेका बीज शिवांबुमें घोलकर पीना । एक साल के भीतर जरारहित हो सकते हैं ।

नस्यं प्रातःप्रकुरुते योगि देवि ! शिवांबुना ।
कफरोगी विनश्यंति वातरोगा सपैत्तिकाः ।
ज्वलज्जठरवन्हिः स्यादतिकायबलोऽबलः ।। ८५ ।।

(८५) सुबह शिवांबुसे नस्य करनेवाले योगीके कफरोग, वातरोग और पित्तरोग नष्ट होते हैं। उसका जठराग्नि प्रदीप्त होता है और देह विशाल और बलवान बनती है।

वारत्रयं वासरे तु रात्रौ योगी त्रिवारकम्।
शिवांबुमर्दनं काये कुर्याद् दीर्घायुषी भवेत् ॥ ८३ ॥

(८६) दिनमें तीन बार और रात को तीन बार शिवांबुसे शरीरमर्दन करनेपर योगी दीर्घायु पाता है।

दृढाङ्गसन्धिः कृत्स्नाङ्गः परमानंद संयुतः।
अहोरात्रं त्रिवार तु यः कुर्यादंगमर्दनम्।
शिवाम्बुना महेशानि ! स्वर्णकायरुचिः सुहृत् ॥ ८७ ॥

(८७) उसका शरीर और जोड दृढ होंगे। वह परमानंद पाएगा। हे पार्वती ! अगर वह दिनरात में तीन बार शिवांबुसे अंगमर्दन करेगा, तो उसकी सुवर्णकान्ति होकर हृदय मजबूत बनेगा।

सकृत्पानं सकृच्चाङ्गमर्दनं यः शिवांबुना।
विदधाति महेशानि ! महाविक्रम विग्रहः ॥ ८८ ॥

(८८) हे पार्वती ! एक बार शिवांबुसे अंगमर्दन करनेवालेका शरीर महापराक्रमी बनेगा।

त्रिवर्षादतिदीप्ताङ्गः कलाविज्ञानसंयुतः।
वाक्सिद्धिस्तस्यजायेत जीवेदाचन्द्रतारकः ॥ ८९ ॥

(८९) तीन वर्षों में उसका शरीर तेजस्वी और कलाविज्ञानयुक्त होगा। उसको वाक्सिद्धी प्राप्त होगी। तारका और चंद्र जबतक हो तबतक वह जिएगा।

अथ देवि प्रवक्ष्यामि षड्ऋतूनां विधानकम्।
येन वै क्रियमाणेन न योगी बाध्यते गदैः ॥ ९० ॥

(९०) हे देवि ! रोगी को किसी प्रकार की बाधा न होगी ऐसे छे ऋतुओं में करने के छे विधान मैं तुमको बताता हूँ ।

वसंतकाले देवेशि क्षौद्रयुक्तां हरीतकीम् ।
प्राश्य विश्वौषधं तद्वत् पश्चात्पानं शिवांबुनः ॥ ९१ ॥

(९१) हे देवेशि! वसंतकाल में हरं, सुँठ और शहद का मिश्रण चाटकर उसपर शिवांबुपान करना चाहिये ।

विंशतिः श्लेष्मरोगाणां चत्वारिंशच्च पैत्तिकाः ।
अशीतिर्वातजान्रोगान् नश्यंते नात्र संशयः ॥ ९२ ॥

(९२) वीस प्रकारके कफरोग, चौबीस प्रकारके पित्तरोग और अस्सी प्रकारके वातरोग नष्ट होते है।

कटुतीक्ष्णरसा वर्ज्या वसन्ते च महेश्वरि ! ।
तेनाङ्गपुष्टिः सत्यं हि जायते योगिनोऽनिशम् ॥ ९३ ॥

(९३) वसंतमे कडूए और तिखे पदार्थ वर्ज्य करने चाहिये । जिससे योगीका शरीर हमेशा पुष्ट रहता है ।

निदाघर्तौ महादेवि ! गुडयुक्तां हरीतकीम् ।
कणां समां च तां प्राश्य पिबेच्छिवजलं यदि ॥ ९४ ॥
पूर्ववत् सर्व रोगाणां विनाशः सूक्ष्म दर्शनम् ।
अंगानां लाघवं नित्यं खेचरीसिद्धिभाग्यवेत् ॥ ९५ ॥

(९४, ९५) ग्रीष्म ऋतुमें हरं और पिपली समभाग लेकर गुड के साथ खाना चाहिये। ऊपरसे शिवांबु पीना चाहिये। जिससे सब रोग नष्ट होकर शरीर हलका होता है । (और सूक्ष्म दृष्टी और खेचरी दृष्टी प्राप्त होती है ।)

वर्षर्तौ सन्धवेनापि प्राश्य युक्तां हरीतकीम् ।
कणामूलं महेशानि ! पिबेत् पश्चाच्छिवाम्बुकम् ॥ ९६ ॥
निरोगः कायसौवर्णसंयुक्तः, पायसेनहि ।
लिह्यते दह्यते नैव वन्हिना योगिराट् स्वयम् ॥ ९७ ॥

(९६, ९७) वर्षा ऋतु में हरं, सैंधव और पिप्पल मूल का मिश्रण खाकर शिवांबूपान करना चाहिये । जिससे शरीर निरोग होकर सुकर्णकांति प्राप्त

होती है। यही मिश्रण दूधमें लेनेसे अग्निज्वाला का शरीरपर परिणाम नहीं होता। अग्नीसे योगीराज नहीं जलता है।

शरदि यः सितायुक्तां संप्राश्यच हरीतकीम्।
बिभीतकस्य चूर्णं तु पिबेच्छिवलं पुनः॥ ९८॥

कायशुद्धी रोगनाशो वेगेन गमनं भुवि।
जायतपरमेशानि! योगसिद्धिरदूरतः॥ ९९॥

(९८, ९९) शरद ऋतु में हर्र, मिस्त्री, और बहेडेका चूर्ण खाकर शिवांबुपान करनेसे शरीर शुध्द होकर रोगनाश होगा। जमीनपर चलनेकी गति बढेगी और योगसिद्धि जलदी होगी।

हेमंततौं शुंठियुक्तां धात्रीफलविमिश्रिताम्।
प्राश्नन् हरीतकीं योगी सर्वरोगविवर्जितः॥ १००॥

हानिर्धातुजदोषाणां नेत्रज्योतिर्विवर्धनम्।
वक्तृत्वं सर्वविज्ञानं जायतेऽस्या प्रयत्नतः॥ १०१॥

(१००,१०१) हेमंत ऋतुमें सूँठी, आँवला (सूखा) और हर्र का मिश्रण प्राशन करनेसे सब रोग दूर हट जाते हैं। धातुदोष नष्ट होते हैं। नेत्रतेज बढता है। प्रयत्न करनेसे वक्तृत्व और ज्ञान प्राप्त होता है।

शिशिरतौंच पिप्पल्या संयुतां च हरीतकीम्।
प्राश्यविश्वौषधियुतां जायतेऽमलविग्रहः॥ १०१॥

शतनागसमप्राणो वलोपलितवर्जितः।
वल्लभःसर्वसत्त्वानां सर्वज्ञः संभवेदपि॥ १०३॥

(१०२,१०३) शिशिर ऋतुमें पिप्पली, हर्र और सूँठका मिश्रण खाना चाहिये। उससे रोगनाश होता है। सौ हाथियोंका बल मिलता है, वृद्धावस्था के लक्षण गायब होते हैं और ऐसा मनुष्य सबको प्रिय होता है।

शिवांबुपाने देवेशि! वर्ज्यान्येतानि यत्नतः।
शाकानि पत्रजातानि तथा पुष्पभवा च॥ १०४॥

कोद्रवाश्चणकाढक्यो मसूरा माषका अपि।
वातुलानि तथान्नानि स्त्रीसेवाधर्मसेवनम्॥ १०५॥

विदाहितीक्ष्णकटुकक्षाराम्लानि विवर्जयेत् ।
तेन योगस्य सिद्धिःस्मादन्यथाऽनर्थसंगमः ।। १०६ ।।

(१०४, १०५, १०६) शिवांबुपान शुरू करनेपर उस अवधि में आगे ी हुई बाते वर्ज्य करनी चाहियें। शाक, सब्जी, हरीक, चना, अरहर, मसूर, उडद और वातकारी पदार्थ, स्त्रीसेवन, अधर्मसेवन, दाहक, तीक्ष्ण, तीखा, खट्टा, क्षार, नमकीन आदि वर्ज्य करना चाहिये। ऐसा करनेसे योगसिद्धी होगी। इसके विपरीत बर्ताव करनेसे बडे संकट आयेंगे।

इदं शिवांबुकल्पाख्यतंत्रं ते वर्णितं प्रिये।
गोपनीयं प्रयत्नेन न देयं यस्य कस्यचित् ।। १०७

(१०७) देवि ! इसप्रकार 'शिवांबुकल्प' नामक तंत्र तुमको वर्णन करके मैंने बताया। प्रयत्न से इसको गुप्त रखना, किसीसे नहीं बताना।

।। इति डामरतंत्रे शिवांबुकल्पविधिः समाप्तः ।।

हमारे नये प्रकाशन

५) संकट निवारण करनेवाले स्तोत्र और मंत्र कीमत ६ रु

इस पुस्तक में दिये गये मंत्र विवाह, संतती, धनलाभ, नौकरी, गुप्तधन, परदेश गमन, शत्रुनाश वगैरे आपकी इच्छा फलद्रूप बनाने में मदत करेंगे।

६) संकल्पसिद्धि कीमत रु. ६

इच्छित कार्य सिद्ध करने की मानस संकल्प विद्या, संकल्प सिद्धिदायक विद्युत मानस यंत्र और उसका उपयोग, त्रिकाल ज्ञानदर्शक अंजन, आयना, अंगुठी बनाने की गुप्त प्रक्रिया और उसका उपयोग।

७) श्रीविष्णु सहस्र नामावलि हर पुस्तक का मूल्य १ ३० रु.
८) श्रीशिव सहस्र नामावलि ,,
९) श्रीगणेश सहस्र नामावलि ,,
१०) श्रीदेवी सहस्र नामावलि ,,
११) श्रीदत्त सहस्र नामावलि ,,

बाजार में बहुत सारी नामावलि उपलब्ध है। पर वे सारी ही अशुद्ध, विज्ञानरहित हैं। हमने जो नामावलि छापी है वे शुद्ध स्वरूप में, आधुनिक विज्ञान के अनुसार इन नामावलिओं में जो विद्युत शक्ति है उसे स्पष्ट करते हुए इनकी रचना की गई है। इन का पाठ करने से पाठकों को शांति, सुख समाधान की पूर्ति मिलेगी।

इन पुस्तकों के अतिरिक्त और भी बहुत सारी पुस्तकें हम प्रकाशित कर रहे हैं।

मंगाईए– श्रीगजानन बुक डेपो, कबुतरखाना दादर, बम्बई २८
भरत नाट्यमंदीर के सामने, पुणे ३०

ताम्रपत्र पर उठाये
अनुष्टान के सिध्द

श्री यंत्र, श्री धनदा यंत्र, श्री गणेश यंत्र
श्री वशीकरण यंत्र, श्री शाबरी यंत्र, श्री
नवनाथ यंत्र, श्री महामृत्युंजय यंत्र, श्री महा
दुर्गा माता यंत्र, ग्रह पीडा शांती यंत्र, श्री
हनुमान यंत्र, श्री शनि यंत्र, श्री दत्त यंत्र
श्री व्यंकटेश यंत्र, श्री बगलामुखी यंत्र, श्री
शिव यंत्र, श्री शिव पंचाक्षरी यंत्र, श्री विद्यु
मानस, श्री चिंतामणी यंत्र, श्री गायत्री यंत्र
यंत्र, श्री कार्यसिद्धी यंत्र, श्री रामरक्षा यं
ये सब यंत्र पूजामे रखे और उसकी उपा
सना करे. हरेक यंत्र जाडे ताम्र पत्रप
उठाये हुये और अनुष्ठानसे सिद्ध किये हुये
है। हर यंत्रकी किंमत और पोस्टज के
लिए लिखे.

आचार्य अ. ल. भागवत रचित नयी पुस्तके-

(१) **योग साधना सिद्धि और साक्षात्कार :** इस पुस्तकमें आचार्यजीने उच्च कोटी की गुप्त एवं दुर्लभ साधनाएँ दी है। प्राणायाम, न्यास, मानसपूजा आदि। जिसके करनेसे आपको सुख शांती का लाभ होगा।

कि. २१ रुपया

(२) **आपका जीवन सुखी करनेवाली व्रत उपासना और टोटका :** प्राचीन कालमें जीवन सुखी बनाने की कुँजी सिर्फ हिंदुओंको ही ज्ञात थी। हमारे अनेक व्रत उपासना, टोटके आचार्यजीने इस पुस्तक में एकत्रित किये है। इस सब व्रत उपासना टोटकोंका उन्होंने स्वयं अनुभव लिया है। यह पुस्तक अनुभव सिद्ध होने के कारण उसका महत्व बहुतही बढ चूका है।

कि. १५ रुपया

(३) **स्वमत्रोपचार चिकित्सा :** स्वमूत्रप्राशन से रोगोसे मुक्त होने की एक अपूर्व उपचार पद्धती जिसे भारतके पतप्रधान श्री. मोरारजी देसाई भी कयी सालोसे उपयोगमे लाते है। कि. ६ रु

(४) **संसार सुखके लिये व्यवहारोपयोगी शिक्षा :** संसार मे हर तरहकी अडचने आती है; संकट आते है मनुष्य संकटोंमे घबरा जाता है; इस पुस्तकमे आचार्यजीने संकटके समय क्या करना चाहिए, कैसा बर्ताव करना चाहिए इसकी अनुभव सिद्ध शिक्षा बतायी है। कि. ६ रुपये.

(५) **शुभ्र बुधवार का व्रत और उपासना :** शुभ्र बुधवार के व्रत की उपासना प्राचीन कालसे परंपरासे चलती आ रही है। जीवन सुखी करने के लिए यह व्रत बहोतही प्रभावशाली रहा है। कि २ रुपया

(६) लैंगिक निर्बलता और उसपर आयुर्वेदीय प्रभावी इलाज

कि ६ रुपया

पुस्तके मंगानेका पता --

श्रींगजान बुक डिपो

कबुत्तरखाना दादर, बम्बई २८.

छपाई : व्ही. राजेंद्र आर्टप्रेस, पु ३०